IJARASEM

ISSN: 2395-7852

International Journal of Advanced Research in Arts, Science, Engineering & Management

Volume 10, Issue 2, March 2023

INTERNATIONAL STANDARD SERIAL NUMBER INDIA

Impact Factor: 6.551

International Journal of Advanced Research in Arts, Science, Engineering & Management (IJARASEM)

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 6.551 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred ournal|

| Volume 10, Issue 2, March 2023 |

समकालीन हिंदी कविता में आम आदमी और जीवन

Dr. Sudhir Soni

Associate Professor, Dept. of Hindi, Govt. PG College, Malpura, Tonk, Rajasthan, India

सार

सही अर्थों में संवेदनशील और जागरूक वही है, जो समय की नब्ज को पकड सके और नित प्रति परिवर्तित होते परिवेश और परिस्थितियों के स्पंदन को अनुभव कर सके। ऐसा व्यक्ति ही लोक मानस को समझ बूझ सकता है। लोक मानस से प्राप्त संवदेनाओं, मान्यताओं, मूल्यों एवं विश्वासों को समझकर सही अर्थों में जीता है। समकलीन हिन्दी साहित्य अपने समय या काल से जुडा है। समकालीन हिन्दी कविता हालांकि अपनी पुरातन धारा से जुडी है पर स्वतंत्रता के बाद आये भारतीय समाज के मूल्यों को बहुत प्रखर रूप से उभार रही है।

परिचय

हिन्दी में समकालीनता शब्द अंग्रेजी के कन्टेम्परेनियम या कन्टेम्परेनिटी शब्दों का रूपान्तरण है जहाँ इनका अर्थ है- 'एक ही समय में घटित होने वाला।' समकालीन शब्द विशेषण है और समकलीनता एक संज्ञा है। स्वतंत्रता के बाद जनता द्वारा सुखद भविष्य के सपने देखे गए। आम आदमी के विकास हेतु पंचवर्षीय योजनाएँ बनीं, पंचशील और वसुधैव कुटुम्बकम् आधारित विदेश नीति बनी। यह मोहग्रस्तता का काल १९६०-६२ तक चला। लेकिन सन् १९६२ में चीनी आक्रमण और उससे प्राप्त पराजय ने अनेक प्रश्ा*ो को खडा कर दिया। चरमराती अर्थव्यवस्था, भ्रष्टाचार, जातिवाद, साम्प्रदायिकता आदि ने आम आदमी का मोहभंग कर दिया। इस प्रकार सातवें दशक के प्रारम्भ में भारतीय वातवरण में घोर अव्यवस्था और उथल-पुथल मची। समाज में इस एक ओर चेतना, जागृति और आक्रामकता जगने लगी, वहीं कुण्ठा, हताशा, प्रताडना, विवशता, दयनीयता, व्याप्त होने लगी। समकालीन कवि इन बदली परिस्थितियों से अप्रभावित न रहा और अपने काव्य में इन स्थितियों का चित्रण किया।

समकालीन कविता अनुभूति एवं अभिव्यक्ति दोनों रूपों में अपनी पूर्ववर्ती कविता से भिन्न है, क्योंकि समकालीन लेखन की भूमिका पूरी ईमानदारी से समकालीन व्यक्ति की जांच पडताल से जुडी है, इसीलिए इसमें अपने समय का यथार्थ चित्रण मिलता है। समकालीन कविता युगीन सन्दर्भों को लेकर नये-नये मूल्यों की स्थापना करती है। यह कोई अलग से आन्दोलन नहीं है बल्कि देश में जारी शोषण, बर्बरता, अत्याचार और आम आदमी की पीडा व्यक्त करने का आधार है। धूमिल, लीलाधर जगूडी, चन्द्रकांत देवताले, वेणुगोपाल, सोमदत, बलदेव बंशी, प्रयाग शुक्ल, सौमित्र मोहन, मलयज, नीलाभ, राजेश जोशी, अरुण कमल, गोरख पांडेय, उदय प्रकाश, मंगलेश डबराल, राजकुमार कुम्भज, ज्ञानेन्द्रपति, मनोज सोनकर आदि कवि समकालीन कविता में अपने समय और परिवेश को चित्रित करने में लगे हैं।

साहित्य में आम आदमी या सामान्य जन की चर्चा विश्व के हर साहित्य में मिल जाती है। साहित्य व्यक्ति विशेष की संवेदनाओं का साधारणीकरण करता है। भारत के प्राचीन साहित्य में सामान्य जन की संवेदनाएं कम ही मिलती है। संस्कृत साहित्य का नायक तो धीरोदात्त प्रकार का होता है। हिन्दी में भक्ति काल में कबीर एवं तुलसी काव्य में सामान्य व्यक्ति का चित्रण मिल जाता है। रीतिकाल में फिर से आम आदमी नदारद है। आधुनिक काल में जन सामान्य एक क्रांतिकारी परिवर्तन के साथ उपस्थित होता है। भारतेन्दु, मैथिलीशरण गुप्त, निराला, पंत, दिनकर आदि के साहित्य में जन साधारण का चित्रण मिल जाता है। सही मायनों में आम आदमी का चित्रण नागार्जुन की कविताओं में मिलता है। इस प्रकार सातवें दशक तक आम आदमी का किसी न किसी रूप में लिखा जाता रहा है पर सातवें दशक के कवियों ने आम आदमी को गम्भीरता एवं विविधतापूर्ण गहन संवेदना के साथ चित्रण किया।

साधारण, सामान्य, मामूली जन आदि आम आदमी के ही पर्याय है पर आम आदमी कहने में जितना पूरा ध्वनितार्थ मिलता है उतना अन्य पर्यायवाची शब्दों में नहीं। 'आम' शब्द अमूर्त है और यह व्यापक अर्थ की उद्भावना लिए हुए है। आम आदमी बिल्कुल मामूली, पद दलित, प्रताडित, विवश व्यक्ति के सन्दर्भ में अर्थ लिया हुआ है। इसी आदमी को परिभाषित करते हुए कमलेश्वर कहते हैं ''यह आदमी

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 6.551 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred ournal|

| Volume 10, Issue 2, March 2023 |

वह है जो कहीं भी किसी भी क्षेत्र में नियन्ता नहीं है पर हर कार्य की आधारशिला है।''१ यह आदमी सामाजिक विषमता से त्रस्त और शोषित व्यक्ति है जो प्रत्येक स्तर एवं हर अवस्था में अपने को विवश पाता है। समकालीन हिन्दी कविता इसी आदमी की पीडा को चित्रित करती है। सातवें दशक की इन कविताओं में आम आदमी की पीडा, संत्रास, दयनीयता, तनाव, जीवन संघर्ष का चित्रण है वहीं व्यवस्था की क्रूरता, दमन, आतंकवाद, साम्प्रदायिकता, भ्रष्टाचार, विकृत न्याय व्यवस्था, महंगाई, भूख, कुपोषण, दरिद्रता आदि वर्णित है। इस कविता में आदमी का विद्रोह, चेतना, संघर्ष, विरोध, जागृति के स्वर भी सुनाई देते हैं।

आम आदमी की सबसे बडी पीडा निर्धनता की है। समकालीन कवि ने निर्धनता और अभाव पर खुल कर लिखा है। कवि दारिद्रय से उत्पन्न संवेदनाएं व्यक्त करते हुए लिखता है- ''अम्मा सोचती/एक दिन हमारी गिद्द सी गरीबी उड जायेगी/मगर वह तोता ठहरी/कमबख्त इसी पिंजरे में जगी बैठी रही/अब माँ का काम बेटी ने संभाल लिया है/और गरीबी/वह कबूतरों सी बढती ही जा
रही है।२''

समकालीन कविता मध्यम वर्गीय अभावों का दस्तावेज है। संवेदना यह है कि गरीब जेब से ही गरीब नहीं होता उसकी मानसिकता और व्यवहार में गरीबी उभरने लगती है। गरीब की नजर में महंगी वस्तुओं का चित्र आ ही नहीं पाता। इसी दृष्टि को समकालीन कविता उभारती है-

''सहसा मैंने सुना/दबी जुबान से/कह रहा था ठेले वाला/इस आदमी के चेहरे से ही/मैं भाँप गया था/यह सस्ती ढेरी से खरीदेगा केले।''३

आज के समय आम आदमी की पीडा को मंहगाई ने और बढा दी है। गरीबी को वह किसी तरह सहन करने की जुगत लगाता है पर दिनोंदिन बढती मंहगाई उसके बनाये हिसाब को गडबडा देती है। पीडा यह है कि दो जून का भोजन भी खटकने लगता है यथा- ''रात भोजन करते हुए/मैं जब भी थाली में छोड देता हूँ/एकाध लुकमा/'और थोडा सा खा लो' के आग्रह के/बदले धीरे से अनाज की महंगाई/की बात करती हो।४''

जब ऐसी पीडा का चित्र उभरता है तो पाठक विह्वित हो जाता है। कवि पूरे समाज को उस पीडा का अहसास कराना चाहता है जो महंगाई और निर्धनता के कारण समाज का साधारण व्यक्ति भोगता है। कवि समाज से ही नहीं, निर्जीव वस्तुओं को भी गरीबी की पीडा से स्पन्दित करना
चाहता है-

''फलों/जब भी तुम महंगे बेचे जाओ/तो तुरन्त सड जाया करो/छूते ही या देखती ही।''५

आम आदमी की एक समस्या बेरोजगारी की है। बेरोजगारी इस वर्ग में एक रूढि ही बन गया है। ग्रामीण इस रोजी रोटी के लिए शहर की ओर भागता है और शहरी दफ्तरों की खाक छानता है। मध्यम वर्ग के लिए नौकरी की तलाश एक बडी जद्दोजहद है। इसी पीडा को कवि इस कविता में उभारता है-

''सुबह साढे दस से साढे पांच तक/सारा दिन किचकिचाती धूप में/चालू चाय और बीडी के सहारे/विद्यालय और सरकारी कार्यालयों से/अखबार के दफ्तरों तक/फकत एक छोटी सी नौकरी की तलाश में/मैं नापता रहा था/अजगर सी लम्बी सडकें।''६

आजीविका देने वाला भी न केवल कठोर काम लेता है, उनका खून तक चूस जाता है। मालिक लोग तो स्त्रियों की लाज तक खेलते हैं। मनोज सोनकर की 'सनीचरी', भागीरथ भार्गव की 'भोली की माँ', उदय प्रकाश की 'करीमन करानची', केदारनाथ सिंह की 'माँ', प्रेम शंकर रघुवंशी की 'बर्तन वाली बाई', आलोक वर्मा की 'बेर बेचती बुढिया' आदि निरीह महिलाएँ मालिकों के शोषण से गुजरती है। समकालीन कविता का एक चित्र देखिए-

''जिस घर में काम करती है माँ/मालकिन की आँख बचाकर/जब मालिक थपथपा देते हैं माँ के गाल/काट लेते हैं चिकोटी/जब लाचारी से झुका लेती है माँ सिर/तब क्यों नहीं बदलती हैं चीजें?''७

महंगाई, बेरोजगारी और इसके लिए हो रहे शोषण से पिसते-पिसते आम आदमी शारीरिक रूप से अक्षम होकर रुग्ण हो जाते हैं। बीमारियों से घिरा गरीब दोहरी मार झेलता है। ऐसे गरीब का चित्रण बहुत करुणा-संवेदना उपजाता है-

''जिनके आंगन में धूप कभी नहीं आती/जिनके संडास घरों में खाँसी/किवाडों का काम करती है/जहाँ बूढे खाना खा चुकने के बाद अंधे हो जाते हैं/जवान लडकियाँ अंधेरा पकड लेती है।''८

देश की स्वतंत्रता के बाद राजनैतिक स्तर पर भी बहुत उथल-पुथल हुई है, जिससे आम आदमी बहुत प्रभावित हुआ। जिस जनतांत्रिक व्यवस्था के नाम पर कल्याणकारी, शोषण मुक्त, धर्म निरपेक्ष शासन की कल्पना की गई थी, वे सपने पूरे न हो सके। शासन व्यवस्था एवं तंत्र की लाल फीताशाही ने आम आदमी के दुःखों को बढा दिया है। पुलिस बडे अपराधियों को संरक्षण देती है, उन्हें पालती है पर गरीब के छोटे से अपराध पर पूरी मुस्तैदी दिखाती है। आम आदमी पर पुलिस का कहर मानवीय संवेदना का चित्र प्रस्तुत करता है। लीलाधर जगूडी की कविता 'बलदेव खटिक' का रंगतू पेट भरने के लिए थोडा सा अनाज चुरा लेता है, और फिर- ''अपनी लात से ताकत पैदा करके/उन्होंने उसे लूट से उठाया/और तुरन्त उसके हाथ बांध दिए/..... फिर थोडा बचे हुए अनाज के साथ/उसे शहर ले गये/जहाँ आदमी के लिए/जेल और पोस्टमार्टम की पूरी
व्यवस्था है।''९

न्याय शब्द भी अपने अर्थ की गरिमा खो चुका है। कानून आम आदमी के हितों की रक्षा कर ही नहीं पा रहा। सर्वत्र भ्रष्टाचार, रिश्वत, विकृत

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 6.551 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred ournal|

| Volume 10, Issue 2, March 2023 |

न्याय व्यवस्था का बोलबाला है। आम आदमी की न्याय की पुकार संवेदना जगाती है-
''दीवान कहता है कि किस कलम से करूं ? चांदी की कलम से करूं/सोने की कलम से करूं/.... मार खाया आदमी रिरियाता है/कि कानून की कलम से करो/कानून की कलम लकडी की होती है।''१०
पूरा तंत्र ही आम आदमी के लिए बना नहीं हुआ। व्यवहार में प्रजातंत्र की आत्मा का ही हनन हो रहा है। यही कारण है कि आम आदमी का आजादी से मोह भंग हो रहा है। लोकतंत्र की हो रही हत्या की संवेदना समकालीन कविता में प्रकट होती है-
''न कोई प्रजा है/न कोई तंत्र है/यह आदमी के खिलाफ/आदमी का खुला सा षडयंत्र है।''११
निर्धनता, महंगाई, बेरोजगारी, रूग्णता, भ्रष्टाचार, लालफीताशाही, विकृत न्याय व्यवस्था एवं लोकतंत्र की अव्यवस्था ने आम आदमी के हृदय के शीतल वारि को सूखा दिया है। मनुष्य के कोमल भाव मिटते जा रहे हैं। पैसे के लिए दौड ने प्रेम जैसी नैसर्गिक आवश्यकता को दर किनार कर दिया है-
''सहसा चौरस्ते पर जली लाल बत्ती जब/एक दर्द हौले से हिरदै को हेल गया/ऐसी क्या हडबडी कि जल्दी से पत्नी को चूमना/देखो फिर भूल गया।''१२
संवेदना यह है कि भावनाओं की कोई कीमत नहीं रही। भावनाएं पथरा सी गई है। अब आम आदमी के जीवन के जीवन में कोई उमंग बचती नहीं दिख रही। भावों की ऊष्मा ठंडी पडती जा रही है। अब भावनाओं और वस्तुओं में कोई फर्क नहीं रहा-
''पर सच तो यह है कि यहाँ/या कहीं भी फर्क नहीं पडता/तुमने जहाँ लिखा है 'प्यार' वहाँ लिख दो 'सडक'/फर्क नहीं पडता।''१३
स्पष्ट है कि परिस्थितियों व व्यवस्था के दुश्चक्र में फंसा आदमी कोल्हू के बैल की तरह श्रम का स्वेद बहा रहा है। उसकी जिजीविषा ही उसे जिन्दा रखे है। वह जी नहीं रहा, वह केवल दिन काटता है। उसकी नियति, भाग्य में यही बदा है कि बिना कुछ कहे, बिना कुछ मांगे, बस यूँ ही खटता रहे-
''मैं कोल्हू का बैल सदा/दशा दिशा क्या जानूँ अपनी/होश संभाला था तब से ही/बन्द हो गये मेरी खातिर/जीने के सब तर्क।''१४
उपर्युक्त विवेचन से कहा जा सकता है कि समकालीन हिन्दी कविता साधारण या आम आदमी के सरोकारों से जुडी है। आम आदमी के संघर्ष, पीडा, नियति, शोषण, द्वन्द्व आदि भावों को व्यक्त करने में यह कविता एक माध्यम बनी है। आम आदमी की पीडा को बयां कर सबमें मानवीय संवेदनाएँ जगाने का स्तुत्य कार्य करने में समकालीन कविता सफल रही है।

विचार-विमर्श

वर्तमान समाज में अर्थ की महत्वपूर्ण भूमिका है। आज अर्थ के माध्यम से रिश्ते बनने लगे हैं। व्यक्ति किसी के साथ रिश्ता तभी जोड़ता है, जब सामने वाला व्यक्ति उसके बराबर का हो। यदि वह बराबरी का न हो तो रिश्ता क्या उससे बात और दुआ-
सलाम तक नहीं होती। इसी से स्पष्ट होता है कि समाज में रहने वाले हर एक इंसान के लिए अर्थ का होना कितना आवश्यक है। ज्ञानचन्द्र गुप्त कहते हैं- ''आज के जीवन में परिव्याप्त जटिलताएँ अर्थमूला हैं। व्यक्ति अपने चतुर्दिक आर्थिक दबावों, अनुभवों एवं विविध संगति-विसंगतियों के मध्य से यातनापूर्ण यात्रा तय कर रहा है। देश की अर्थव्यवस्था, संक्रमणकाल के विविध संदर्भों से गुजर कर राष्ट्रीय विकास की ओर गतिशील हैं आज देश अपने पुनः निर्माण में व्यस्त है। जब तक देश की गरीबी जनता को पेट भर भोजन, तन ढँकने को वस्त्र औ र रहने को मकान नहीं मिलता, तब तक उसके जीवन में आशा-

उल्लास का प्रश्न ही नहीं उठता।''1 इससे स्पष्ट होता है कि आर्थिक जटिलताओं के कारण व्यक्ति का जीवन कितना त्रासद, घुटनशील एवं पीड़ादायक है। आम आदमी के लिए दो वक्त की रोटी न जुटा पाना, रहने के लिए मकान का न होना एवं तन ढँकने के लिए कपड़ों का न होना कितनी बड़ी विडंबना है।

ग्रामीण क्षेत्र में आर्थिक विपन्नता की दुर्दशा में जी रहे आम आदमी का जीवन नरकीय है। पूँजीवाद के कारण समाज में अनेक प्रकार की विषमताओं का जन्म हुआ। पूँजीपति वर्ग दिन-प्रति-दिन धनी होते जा रहे हैं और आम जनता जो सर्वहारा वर्ग है, दिनों-
दिन गरीब। जगदीश नारायण श्रीवास्तव कहते हैं-

''पूँजीवादी व्यवस्था हमारे समाज में यथावत बनी हुई है। पूँजीवाद ने समाज ने अनेक दोषों को जन्म दिया है, उनमें एक महत्वपूर्ण वर्ग वैष म्य है। पूँजीपति अधिकाधिक धनी और सर्वहारा निरंतर अधिकाधिक निर्धन होते चले जा रहे हैं।''2 आम आदमी के लिए आर्थिक विषमता एक अभिशाप है, जिससे उनका जीवन दमित, शोषित एवं कुंठाग्रस्त हो गया है। पूँजीवाद का रवैया यह है कि जिस डाल (सर्वहारा, आम आदमी) पर बैठा है, उसी को काटता है। यह कथन आम जन के जीवन की व्यवस्था को चरितार्थ करता है। 2

आर्थिक अभाव के कारण आम आदमी का कष्ट दूर होने के बजाए और अधिक गहराता, बढ़ता जा रहा है। इसका प्रभाव छोटे कस्बों, ग्रा मीण क्षेत्रों, नगरों के झुग्गी-झोपड़ी में रहने वाली आम जनता एवं अंचल में रहने वाले युवा-

मन पर अत्यधिक पड़ा है, जिससे उनका निराशा, हताशा, पराजय की भावना, कुंठा, तनाव, घुटन आदि से प्रभावित होना स्वाभाविक है। गरीबी दूर करने के लिए सत्ताधीशों के द्वारा अनेक योजनाएँ की जाती है, परंतु गरीबी कबूतर की तरह बढ़ती ही जाती है। ‘‘आज आम आदमी की प्रमुख समस्याएँ मँहगाई, बेरोजगारी, भुखमरी एवं निर्धनता आदि है, जिनसे वह प्रतिपल जूझ रहा है। साम्प्रतिक परिवेश में बेकारी, बेरोजगारी की समस्या निरंतर बढ़ती ही जा रही है। शिक्षित रोजगार काम की तलाश में भटकते एवं अपना अस्तित्व तक समाप्त कर देने हेतु विवश हैं।’’3 बेरोजगारी मँहगाई, भूखमरी और निर्धनता ने आम आदमी का कमर तोड़ दिया है। बेरोजगारी शिक्षित लोगों के लिए नासूर बन गया है, इसके कारण व्यक्ति दर-दर भटकता है और रोजगार न मिलने के कारण हताश और निराश होकर अपनी जीवन-लीला समाप्त करने के लिए मजबूर हो जाता है।

वर्तमान समय में रिश्वतखोरी, कालाबाजारी, मुद्रास्फीती, चोरबाजारी और भ्रष्टाचार आदि ने आर्थिक समस्याओं को और अधिक बढ़ाया है, जिसके कारण निम-
मध्य वर्ग और निम्न वर्ग की जनता घुन की तरह पिस रहा है। समकालीन हिंदी कवियों ने इन समस्याओं से जूझ रहे आम आदमी की पीड़ाओं का चित्रण मार्मिकता के साथ किया है। निर्धनता आम आदमी के लिए एक अभिशाप है। 3
आर्थिक तंगी में जीवन-
यापन कर रहे आम आदमी की इच्छा है दो वक्त की रोटी, किंतु उन्हें दो वक्त की रोटी नसीब नहीं। रोटी, कपड़ा, मकान के लिए उन्हें शोषक एवं सामाजिक षड़यंत्रों के विरूद्ध लड़ना एवं संघर्ष करना उनकी नियति बन गई है।

जिस प्रकार साहित्य में अलग-अलग वाद हुए, वैसे ही रचनाकारों की भी अलग-
अलग खेमे हुए, परंतु इस समय जो रचनाएँ लिखी जा रही थी वह बिना खेमे में बँटे उस समय के समाज की स्थिति, आम आदमी की पीड़ाओं को मार्मिकता के साथ उजागर किया है। नगेन्द्र कहते हैं- ‘‘इस दौर की कविता की मुख्य चिंता आम आदमी की ज़िंदगी का सुख-दुख, उसका संघर्ष ही है। जैसे बहुत से कवि प्रगतिवादी खेमें में शरीक हुए बिना प्रगतिवादी कविताएँ लिखते रहे, उसी प्रकार समकालीन दौर में किसी भी खेमे में भर्ती हुए बिना बहुत से कवि आम आदमी की जिंदगी का यथार्थ रूपायित कर रहे हैं।’’4
धूमिल की कविताओं में आर्थिक अभाव से जूझता आम आदमी की पीड़ाओं को महसूस किया जा सकता है। कवि ने अर्थ के अभाव में ग्रसित, पीड़ित जनता की पीड़ा को इस प्रकार व्यक्त किया है- 4

‘‘चैके में खोयी हुई औरत के हाथ
कुछ भी नहीं देखते। वे केवल रोटी बेलते हैं
और बेलते रहते हैं।
एक छोटा सा जोड़-भाग।
बड़कू को एक/छोटकू को आधा।
परबत्ती-बालकिशुन आधे में आधा। कुल रोटी छै।’’ (कल सुनना मुझे: किस्सा जनतंत्र: धूमिल: 16)

औरत का चैके में व्यस्त रोटियाँ बनाना, उसका हिस्सा, बँटवारा करने में गुणा-
भाग करना उसकी आर्थिक विषमता, तंगी हालत को बयान करता है। माता-
पिता एवं पूरा परिवार आर्थिक अभाव की आग में मानों झुलस रहा है- ‘‘गृहणी भोजन बनाते-
बनाते कुल सामग्री का हिस्सा बाँटा करने में लगी है। वस्तुतः यह वर्ग इतनी निर्धनता में जीवन-
यापन कर रहा है कि ‘रोटी’ सदृश्य नितांत नैसर्गिक आवश्यकता की प्रतिपूर्ति में भी असमर्थ है। यहाँ बच्चे भूखे रह जाते हैं। माँ का चेहरा पथराया रहता है, पिता अभावों में जूझते काठ बन जाते हैं। सारा-का-
सारा घर अपनी ही आग में जलता हुआ प्रतीत होता है।’’5 रचनाकार ने आर्थिक अभाव का चित्रण मार्मिकता के साथ किया है। आगे देखिए-
‘‘करछुल-बटलोही से बतियाती है और चिमटा 5
तवे से मचलता है। चूल्हा कुछ नहीं बोलता।
चुपचाप जलता है और जलता रहता है।’’
(कल सुनना मुझे: किस्सा जनतंत्र: धूमिल: 16)
धूमिल की कविताओं में आर्थिक अभाव से उत्पन्न आम आदमी की पीड़ाओं के बारे में विद्यानिवास मिश्र कहते हैं- ‘‘गरीबी के चित्र गैर-गरीब लोगों ने खींचे हैं, गरीबी में झिलने वालों ने खिंचे हैं, पर गरीबी की भाषिक संपन्नता में जीने वाले शायद अकेले धूमिल हैं, जिनकी कर

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 6.551 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred ournal|

| Volume 10, Issue 2, March 2023 |

छुल बटलोही से बतियाती है (क्योंकि बात बात है वहाँ और कुछ नहीं) चिमटा तवे से मचलता है। जिनके घर 'चूल्हा' (मन का ताप) कुछ नहीं बोलता, चुपचाप जलता है और जलता रहता है, वहाँ पहले 'थाली खाती है' तब आदमी रोटी खाता है।''6

मँहगाई की थपेड़े की मार निम्न-

मध्यवर्गीय आम आदमी के जीवन एवं मस्तिष्क पर अधिक प्रभाव पड़ता है। यथार्थ के कठोर धरातल पर मेल-मिलाप, स्नेह, प्रेम-भावना, प्यार-6

प्रदर्शन, सहयोग, दया, सहानुभूति, करूणा आदि भावनाएँ एकाएक शुष्क एवं तिरोहित होते जा रहे हैं। आर्थिक अभाव में पत्नी पति को आदर, लाड़, प्रेम से खाना अधिक खिलाने के बजाए उसके थाली में छोड़े गए एकाध लुकमें की तरफ ललचाई नज़र से अधिक देखती है। मँहगाई की मार से जूझ रहे निम्न वर्ग की पीड़ा को धूमिल ने अपनी कविता में मार्मिकता से व्यक्त किया है-

''रात भेजन करते हुए
मै। जब भी थाली में छोड़ देता हूँ
एकाध लुकमा।
और 'थोड़ा सा खा लो' के आग्रह के
बदले धीरे से अनाज की मँहगाई
की बात करते हो।'' 7

(सूदामा पाण्डे का प्रजातंत्र: गृहयुद्ध: धूमिल: 38)

रघुवीर सहाय एक सजग, जागरूक और संवेदनशील रचनाकार हैं। उन्होंने अपनी कविता में समाज की यथार्थता का चित्रण मार्मिकता के साथ किया है। उनकी कविताओं में आर्थिक अभाव से जूझता आम आदमी की जीवन, जो शक्तिशाली, ताकतवर वर्ग के द्वारा उपहास के शिकार होते हैं, गरीबी की मार और थपेड़े झेलता हुआ आम आदमी चाह कर भी वह कुछ नहीं कर सकता, मानों ये सब विसंगतियाँ झेल ना उनकी नियति हो, ताकतवर वर्ग द्वारा उपहास के पात्र बने उन गरीब आम आदमी का चित्रण इस प्रकार किया गया है-

''और ऐसे मौके पर हँसो
जो कि अनिवार्य हो
जैसे गरीब पर किसी ताकतवार की मार
जहाँ कोई कुछ नहीं कर सकता
उस गरीब के सिवाय
और वह भी अक्सर हँसता है।''

(हँसो-हँसो जल्दी हँसो: रघुवीर सहाय: 26)

'दयाशंकर' कविता के माध्यम से रचनाकार ने मध्यवर्गीय आम आदमी के आर्थिक अभाव से जूझते जीवन का जीवंत चित्रण किया है। द याशंकर की पत्नी के मन में एक दिन पूआ खाने की लालसा जगी। पूरे परिवार के लिए पूआ बनाना असंभव था अतः बच्चों के सो जाने के बाद पूए पकाती है और पति-पत्नी मिल-बाँट कर अपनी इच्छा, अभिलाषा, लालसा को शांत करते हैं। इस छोटी-सी घटना का वर्णन कवि ने यथार्थता के साथ किया है- 8

''उस रोज रात को बिस्तर पर कुछ शरमाकर
मुंशी की बीबी ने मुंशी से कहा सुनो
मेरा मन पूआ खाने को जब करता है
तब मुझको यह होना मुश्किल दिखलाता है
यह बात दयाशंकर ने दुःख के साथ सुनी
वह सात जनों के लिए कहाँ पूआ लाते
वह चुप होकर के लेटे रहे इसलिए कि वह
माने बैठै थे पूआ पति घर लाता है।
तब ज़रा देर कर इंतजार बीवी बोली
उठ पड़ो अभी हम लोग पका खाएँ पूआ
बच्चे सोते हैं मीठी नींद झगड़ करके
बस जो तुतला है कभी-कभी अकुलाता है
वह उठी अरे वह कितनी सुंदर लगती थी
दुबली कोई आवाज न होने दी उसने
ऐसे चुपचाप पकाए उसने चार पूए

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 6.551 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred ournal|

| Volume 10, Issue 2, March 2023 |

जैसे पूआ ही मधुर मिलन कहलाता है।
दोनों अपने-अपने हिस्से के पूए ले
जैसे जहाँ वहाँ पर बैठे खाते हैं
इतने में सब बच्चे एकदम से जगते हैं
उठ पड़ते हैं मुसकाते हैं सो जाते हैं।''
(समकालीन हिंदी कविता: रमेश अनुपम: 44-45)

'दयावती का कुनबा' कविता में गरीबी और दरिद्रता से जूझते आम आदमी की करूण कथा का चित्रण किया गया है। दयावती संघर्षरत मध्यवर्गीय औरत अपनी सारी इच्छाओं को दमित करके ससुराल में टिक जाती है। कई प्रकार के रोगों को झेलते हुए चार पुत्रों की माँ बनी । पेट का मरीज पहला बेटा मामूली तनख्वाह के कारण अपने आप को बीड़ी-9
सिगरेट एवं चाय से बीमारी को दबाता रहा। मँहगी दवाई के अभाव में एक दिन इस दुनिया से चला गया। उसकी विधवा पत्नी चूल्हे-
चैके एवं आर्थिक अभाव के कारण दुखों से चल बसी। दूसरा बेटा आॅफिस के बाबूओं की धौंस चुपचाप सिर झुकाकर सहता बिना दवा-
दारू के चल बसा। तीसरा बेटा आर्थिक विपन्नता से बीवी की तानों के कारण ज़हर खाकर मरा। दयवती कम पढ़ी-
लिखी होने के बावजूद कड़ी मेहनम-
मज़दूरी करके अपनी बेटी को दो वक्त की रोटी जुगाड़ करने लायक बनाती है। दामाद ढूँढ़ने में वह अंतिम साँस तक लगी रही और दो वि धवाओं को छोड़ एक दिन दयावती चल बसी। आर्थिक तंगी का सिलसिला एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी हस्तांतरित होता गया। 'दयावती का कुनबा' कविता का एक उदाहरण इस प्रकार है-
''तो अंतिम साँस तक घिसटती दयावती
दोनों विधवाओं को छोड़ गुजर जाती है
पोतियों की खबर हमको पता नहीं
वे अपनी दादी की तरह कहाँ
बोझ कम करने के लिए विदा होती है।''
(दयावती का कुनबा: कुछ पते की चिट्ठियाँ: 64)
उदय प्रकाश की 'वैरागी आया है गाँव में' कविता में कवि ने निम्न एवं सर्वहारा वर्ग की आर्थिक अभाव के कारण विपन्नता दरिद्रतापूर्ण जीव न-यापन कर रहे आम आदमी का चित्रण किया गया है। आर्थिक अभाव के कारण रोटी-
रोटी के लिए तरसते, तड़पते, बिलखते, रिरियाते आम आदमी की पीड़ा दिनों-
दिन बढ़ती जाती है। कई दिनों से उनका चूल्हा नहीं जला। इन विषमताओं से जूझते आम आदमी का चित्रण इस प्रकार करते हैं-
''जहाँ तुम्हारा चूल्हा ठंडा पड़ा है। 10

पतीली औंधी धरी है और पाँच दिन की भूखी कानी कुतिया
जहाँ सो रही है। पाँच दिन की बुझी राख पर।''
(अबूतर-कबूतरः वैरागी आया है गाँव में: उदय प्रकाश: 16)
चूल्हा का नहीं जलना ठंडा पड़ा रहना, पाँच दिनों तक कानी कुतिया का भूखा रहना उस घर के मालिक की अत्यंत दयनीय स्थिति को इं गित करती है।
बली सिंह की 'दो पीढ़ियाँ' कविता में कवि ने निर्धनता का बेबाक बयान किया है। भोले-
भाले नैतिक आशा में जीवन जी रहे आम आदमी की गिद्ध सी गरीबी उड़ जाएगी, परंतु वह तो तोता के समान पिंजरे में बैठी है। माँ का का म अब बेटियों ने करना शुरू किया, परंतु गरीबी कम होने के बजाए दिनों-दिन कबूतरों जैसी बढ़ती ही जा रही है-
''अम्मा सोचती।
एक दिन हमारी गिद्ध-सी गरीबी
उड़ जाएगी। मगर सह तोता ठहरी।
कमबख्त इसी पिंजरे में लगी बैठी रही।
अब माँ का काम बेटी ने संभाल लिया है।
और गरीबी/ वह कबूतरों-सी बढ़ती ही जा रही है।''
(वर्तमान साहित्य: दिसम्बर 1983: 50)

इस संदर्भ में मृदुला जोशी का कथन है-
''आज का कवि उन समस्त कराहों को सुन रहा है, उन समस्त पीड़ाओं को अपने हृदय में झेल रहा है। बलीसिंह के उद्धृत कवितांश में

गरीबी को गिद्ध कहकर उससे नुचने और चींथ-
चींथ हो जाने का भाव जुड़ा है। 'तोता' कहकर उसे उनके घर में ही सदियों से अड़े रहने का संकेत है। यहीं नहीं कबूतर के प्रतीक द्वारा उ सके निरंतर बढ़ते ही जाने की ओर इंगित कर दिया गया है।''7
ऋतुराज के 'सूरत निरत' काव्य-
संग्रह की एक कविता 'एक बूढ़ा आदमी अपने बेटे के लिए सेव खरीदता हुआ' में आर्थिक अभाव के कारण एक बूढ़े पिता को जूझता हु आ दिखाया गया है। आयरन, विटामीन से भरा सेव अपने बीमार बेटे के पथ्य के लिए सेव खरीदना चाहता है। परंतु गरीबी, निर्धनता, लाचा र पिता आथ्रिक अभाव के कारण सेव खरीद पाना उसके लिए असंभव है। पिता की पीड़ा को कवि ने इस प्रकार प्रदर्शित किया है-11

''मैं एक बूढ़ा आदमी तंग जेब की शून्यता में।
उलट-पुलट करता मरूस्थल की रेत
और लौह शक्कर विटामिन युक्त वो सेव दुनिया का।
मेरे लिए वर्जित। मैं एक ईष्र्यालु निरूपाय चोर।
अपने बीमार बेटे के लिए आँखों से चुराकर ले जाता हूॅ॑
सारे तत्व।''
यहाँ सेव रोगी के पथ्य के लिए आवश्यक फल मात्र नहीं है, वह तो पूँजीपति, सामंत वर्ग, संपन्न वर्ग के एकाधिकार का प्रतीक है। एक ऐसा फल जिसे पैदा करने के लिए यही आम आदमी काम करते हैं, लेकिन इस पर अधिकार उच्च वर्ग, साधन संपन्न वर्ग का ही है। आम आद मी के लिए खरीदने की क्षमता नहीं, वर्जित है। निर्धन गरीब मात्र देखकर ही सारे तत्व को ले सकता है। बूढ़े पिता का जीवन तो कट जाए गा, परंतु आने वाली नई पीढ़ी के लिए स्वस्थवर्धक फल का मिलना कठिन है। आम आदमी की आर्थिक पीड़ा छटपटाहट का मार्मिक चित्र ण यहाँ देखने को मिलता है।
इसी समूह की एक और कविता में भी आर्थिक अभाव के कारण जूझते आम आदमी की पीड़ा का चित्रण इस प्रकार किया गया है-
''कौन पसंद करता है अनार
उच्च वर्ग की तरह खून से छका है अनार।
थोड़ी सी भींच में त्राहि-त्राहि करता
पास से गुजर जाता है बीमार।
(सूरत-निरत: धूप से अनार तक: ऋतुराज: 62)
अनार एक मँहगा फल है, आदमी के लिए इसे खरीदना बड़ा मुश्किल है। अनार रोगी, बीमार व्यक्ति के लिए कितना आवश्यक है, उसकी अहमियत तो खरीदने वाले व्यक्ति ही समझ सकता है। अनार न खरीद पाने की विवशता, कुंठा एवं घुटन एवं आक्रोश आम आदमी में दि खाई देता है।
विनोद दास की कविता 'पोस्टर' में एक गरीब निर्धन आम आदमी का चित्रण किया गया है। चरितनायक ठेले के पास खड़े होकर दो प्रका र के रखे केले को देखता है। एक ओर ताजे भरे-पूरे पीले-पीले चित्तीदार और दूसरी ओर ऐंठे, सूखे, अधसड़े काले-
काले, गिलपिच्चे। गरीबी की विडंबना देखिए वह व्यक्ति कभी अपनी जेब को देखता है, कभी ठेले पर रखे केले को। उसके पास अच्छे के ले खरीदने के लिए पर्याप्त पैसे नहीं है इसलिए वह सूखे, ऐंठे, गिलपिच्चे, अधसड़े में से कुछ छाँट लेता है, तभी ठेले वाले को एकाएक बुद बुदाते सुनता है-
''सहसा मैंने सुना। दबी जुबान से
कह रहा था ठेले वाला। उस आदमी के चेहरे से ही। 12
मैं भाप गया था। यह सस्ती ढेरी से खरीदेगा केले।''
(ज्ञानरंजन: पहल-37: 259-260)
मणिमधुकर की 'लाल कमीज' कविता में निम्न वर्ग और उच्च वर्ग दोनों वर्गों की जीवन-
शैली के अंतर को चित्रित करने का प्रयास किया गया है। उच्च वर्ग की आर्थिक संपन्नता के बावजूद तन नहीं ढकते, परंतु निम्न वर्ग की मज़ बूरी है। निम्न वर्ग की आर्थिक अभाव के कारण उनके पास तन ढँकने के लिए कपड़े नहीं है। कविता की मार्मिकता का चित्रण देखिए इस प्रकार है-
''एक कद्दावन शरीर। अपनी लाल कमीज़ को
दोनों हाथों से। नीचे खींच रहा है
ताकि वह उसके घुटनों को ढँक ले।
घुटने नंगई की धूप में चमक रहे हैं।''
(बलराम के हजारों नाम: मणिमधुकर: 52)

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 6.551 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred ournal|

| Volume 10, Issue 2, March 2023 |

सलीम खान की 'इलमदीन' कविता में एक मेहनतकश मज़दूर की आर्थिक अभाव की कथा का चित्रण किया गया है। मज़दूर जी-जान लगाकर मेहनत करता है, परंतु उसे सेठ द्वारा उचित मज़दूरी नहीं मिल पाती है, जिसके कारण उसका पूरा परिवार भूखे-प्यासा, अभावग्रस्त जीवन व्यतीत करता है। इस तरह का जीवन जीना उनकी नियति बन गई है। आर्थिक अभाव के कारण आम आदमी का जीवन अशांति, कलहपूर्ण, तनावग्रस्त, छोटी-छोटी बातें में आपसी मन-मुटाव, झगड़ा आदि का वातावरण परिवार में बढ़ता गया। कवि इसी का चित्रण मार्मिकता के साथ करते हैं-

''इस तरह/कई-कई दिन/उदास ही रहता है उसका चूल्हा
भूखे रह जाते हैं बच्चे/गुस्से में चीखने लगती है बीवी
तब उसे पीट देता है इलमदीन।''
(लहर (कवितांक-2) जनवरी-फरवरी 1983: 55)

बढ़ती मँहगाई ने आम आदमी की कमर तोड़ दी है। शोषित, दमित वर्ग इन समस्याओं से प्रतिदिन जूझ रहा है। गरीबी, दरिद्रता से हर ए क आम आदमी संघर्ष करते थक चुका है। उसके कदम, पग लड़खड़ा उठे हैं। मँहगाई रूपी डायन, अजगर उसके अस्तित्व को लीलना चाहता है। इन समस्याओं से जूझती मध्यमवर्गीय जनों की मार्मिक पीढ़ा का बयान नरेन्द्र गौड़ ने 'उसकी एक रात' कविता में करते हैं- 13

''20 दूध वाले को! 40 राशन के
15 लगेंगे मिट्टी के तेल में/60 मकान मालिक को जाएँगे
100 किराने वाले को/किताबें भी आनी हैं।
बच्ची की इसी माह/ 30 तो चाहिए/
साग-सब्जी दिगर में/टल्ला मारती/पूछेगी-
अखबार बंद कर दें ? उत्तर की प्रतिक्षा किए बिना/
जोड़ने लगेगी/फिर से/बुदबुदाते रहेंगे ओंठ/
हिलती रहेंगी/ उसकी/उंगलियाँ/नींद में।''
(उसकी एक रात: नरेन्द्र गौड़: 59)

मँहगाई का दबाव हर व्यक्ति के जीवन में इस कदर हावी है कि सोते-जागते, सुबह-शाम, दिन-रात घर चलाने की चिंत सताती रहती है। महिना शुरू होते ही हर एक चीज का हिसाब-किताब शुरू हो जाता है, किसे कितना पैसा देना है। कहाँ कितना भुगतान करना हैं बच्चों की फीस, दूध वाले का, राशन का, मकान किरा या, अखबार वाले का, किराना का, बच्चों के किताबों का, साग-सब्जी का सबका अलग-अलग हिसाब। इतने हिसाब के बाद गृहस्थी रूपी गाड़ी चलाने की चिंता अलग से सताती है। पूरा जीवन आर्थिक अभाव में हिसाब-किताब करते बीतता है।

समकालीन कविताओं में कवियों ने आम आदमी की आर्थिक पीड़ाओं का चित्रण यथार्थता के साथ किया है। साथ ही आम आदमी के दुख -दर्द, वेदना, आकांक्षाओं का मार्मिक चित्रण कविताओं में देखा जा सकता है। एक ओर कवियों ने कविताओं में पूँजीवादी, सामंतवादी, ज मींदारी, उद्योगपतियों, राजनीतिज्ञों एंव अन्य शोषक वर्ग के प्रति विद्रोह की ज्वाला धधकती दिखलाई पड़ती है, तो दूसरी ओर किसान, म ज़दूर, निम्नवर्ग, निम्न-मध्यवर्ग, बेरोजगार, धोबी, मोची आदि आम आदमी को अपने ही जन-ज़मीन से बेदखल कर उन्हें मज़दूरी करने के लिए शहरों एवं महानगरों की ओर पलायन करने के लिए विवश करने वालों के प्रति भी विद्रो ह के स्वर स्पष्ट झलकते हैं। आम आदमी इतने दमित, शोषित, पीड़ित एवं मज़बूर होते हैं कि उनमें अपने स्वाभिमान के लिए, अपना हक पाने के लिए लड़ने और संघर्ष करने की हिम्मत नहीं जुटा पाते। किंतु आज इस घुटन, संत्रास, छटपटाहट आदि विडंबनाओं को खुलकर चुनौति दे रहे हैं। इस समय के सभी रचनाकारों ने आम आदमी की आर्थिक पीड़ाओं का मार्मिकता एवं यथार्थता के साथ किया है। एक ओर वे हमेश आम आदमी के साथ दया, करूणा एवं सहानुभूति का भाव प्रकट करते हुए उनके साथ खड़े दिखलाई पड़ते हैं और दूसरी ओर शोषक वर्ग के प्रति विद्रोह की भावना स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है।14

परिणाम

समकालीन हिंदी कविता का प्रस्थान बिंदु अस्सी के आस-पास माना जाता है। इस समय हिंदी कविता अपनी पूर्ववर्ती कविता से विभिन्न स्तरों पर स्वयं को अलगा रही थी। अलहदा होने का लक्षण कविता में साफ-साफ दिख रहा था। कवियों ने इसे कविता की मुख्यधारा में वापसी कहा। यह अलहदापन संवेदना, भाव, विचार, दर्शन एवं भाषा के स्तर पर झलक रहा था। क्योंकि पूर्व की कविता में विद्रोह, हर चीज का निषेध एवं मोहभंग का गुस्सा था। कवियों के समक्ष कोई बड़ा लक्ष्य नहीं दिखायी पड़ रहा था। दिशाहीनता के शिकार ये कवि कविता को प्रभावी बनाने के लिये गोला, बारूद, बंदूक, क्रांति, गुरिल्ला युद्ध जैसे शब्दों को ठूंस रहे थे। कविता छद्म भावों एवं कृत्रिम

शब्दों के चारों ओर चक्कर काट रही थी। लेकिन अस्सी के दशक तक आते आते स्थिति में परिवर्तन आया। कविता वस्तुस्थिति से साक्षात्कार करती दिखाई पड़ती है।समकालीन हिंदी कविता सकारात्मक मानव मूल्यों के साथ ही मुनष्य को समग्रता में आत्मसात कर चलती है। मनुष्य को तोड़नेवाली हिंसा और उसके विकास की दिशा को रोकनेवाली साम्राज्यवादी ताकतों के खिलाफ सृजनात्मक मूल्यों को प्रश्रय देती है। इसमें सकारात्मक हस्तक्षेप का भी स्वर है। इस कविता की मूल शक्ति है-मानवीय संवेदना, करुणा, दया, अहिंसा, मानवाधिकार के तत्व, लोकतांत्रिक जीवन मूल्य। कवि सामान्य लोगों की बौद्धिक कमजोरी को दूर कर समाज में समता, बंधुत्व एवं न्याय की स्थापना के लिये संघर्ष करने को प्रेरित करता है। उसके ज्ञान क्षितिज का विस्तार करता है। रूढ़िवादिता, अंधविश्वास, अज्ञानता को मिटा कर, वैज्ञानिक चेतना जगा कर उसे स्वविवेक से सत्य और असत्य के निर्णय करने के योग्य बनाता है। उसे संवेदनशील बना कर इंसानियत की रक्षा के लिए सामाजिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक स्तर पर तैयार करता है। उसे अपनी सुविधाओं एवं खुशियों को हासिल करने के लिये गुरिल्ला युद्ध करने, उसके हाथों में हथियार नहीं थमाना चाहता है। आज का कवि जानता है कि हिंसा से मानव समुदाय का अहित होगा। आनेवाली पीढ़ियों के लिये यह धरती शांति, प्रेम एवं भाईचारे को खो देगी। विषमतामूलक समाज को मिटा कर मानवीय समानता के आधार पर देश-दुनिया का निर्माण समकालीन कविता का लक्ष्य है। हिंसा, खून खराबा को प्रश्रय न देकर कवि मनुष्य को मनुष्य से जोड़नेवाले तत्व प्रेम, करुणा, दया, अहिंसा, सत्य, आत्मीयता, सहानुभूति, सहयोग जैसे महान मानव मूल्यों को संपोषित करता है। जीवन को सकारात्मक दिशा की ओर बढ़ने में मदद करनेवाली प्राकृतिक उपादानों को भी आज की कविता अहम मानती है। इसके लिये लाल आतंक और घातक हथियारों की जगह कविता में- धरती, आकाश, बादल, बारिश, पेड़, पौधों, फूल, चिड़ियां, नदी, पहाड़, जंगल, सुबह, शाम, दोपहर, वसंत, सर्दी जैसे प्राकृतिक रूपों को विशेष स्थान दिया गया है। वहीं साधारण आदमी की इच्छा, प्रेम, विचार, भाव, सहयोग, संघर्ष, खून-पसीना और बदलते सामाजिक मूल्यों का चित्रण भी है। घर, परिवार, पत्नी, मां, बाप, बच्चे, मित्र, टोला, पड़ोस, खेत-खलिहान, श्रम एवं फसलें मिल कर आज की कविता को पूर्व की अपेक्षा जनसरोकारों से जोड़ता है। वह जीवन के यथार्थ का मानो भोक्ता हो गयी है। वायवीय भावों, विचारों एवं कल्पनाओं के लिये यहां बिलकुल जगह नहीं है। आज की कविता अनंत संभावनाओं से युक्त तेजी के साथ जीवन के अनछुए पहलुओं को रच रही है। इसमें आतंक और चीख-पुकार या शोर-शराबा नहीं है। यही कारण है कि समकालीन कवियों की कविताएं नारेबाजी एवं बड़बोलेपन का शिकार नहीं हैं। व्यक्ति, समाज, देश एवं दुनिया के अनुभव, चिंतन एवं लोगों के संघर्ष को स्वाभाविक तरीके से सहज एवं सरल भाषा में व्यक्त किया जा रहा है।एक मायने में समकालीन हिंदी कविता पूर्व की कविता का सहज एवं स्वाभाविक विकास है। इसी समय कई युवा कवि अपनी उर्वर प्रतिभा के साथ उभर कर आए। कहना न होगा, इन कवियों के पास स्पष्ट दृष्टिकोण एवं नयी दिशा थी। यही करण है कि इनकी कविताओं में उलझे हुए न तो बिंब मिलते हैं और न भावबोध के स्तर पर कोई क्लिष्टता। कवि जो बात कहना चाहता है उसके प्रति उसकी मंशा बिलकुल साफ है। अपनी विचारधारा को प्रगतिवादियों एवं प्रयोगवादियों की तरह पाठकों पर थोपता नहीं हैं। इन कवियों में सबसे बड़ी विशेषता जो नजर आती है वह है विनम्रता। उनकी आत्मीयता समाज के दबे, कुचले, वंचित, शोषित, मनुष्य के प्रति है। वहीं स्त्री, बालक, युवा, वृद्ध की तकलीफों, उसके सपनों एवं उनकी स्थितियों में परिवर्तन की आशा भी है। दलित, मजदूर, किसान, स्त्री, छात्र, शिक्षक, पत्रकार, नेता, उद्योगपति, आदिवासी समाज, हर किसी के इतिहास और वर्तमान हालात का कवि आकलन करना चाहता है। अपने परिवेश, संस्कृति, देश एवं भाषा के प्रति में उत्कट प्रेम दिखायी पड़ता है। यहां निषेधवादियों की तरह पूरी तरह सब चीजों का नकार नहीं है। क्योंकि जीवन में सबकुछ बुरा हीं नहीं होता। उसमें नवसृजन के बीज हमेशा आत्मा की तरह सुरक्षित रहते हैं। कवि अपने परिवेश एवं परंपरा में उस सृजनात्मक बीज की तलाश करता है। और अवसर आते ही पूरी संवेदना के साथ कविता में चुपचाप अपना स्थान ग्रहण कर लेता है। बदलाव की दिशा तय होने लगती है। हां, एक बात मैं समकालीन कविता के बारे में जरूर कहना चाहता हूं वह यह कि आज की कविता आंदोलनविहीन दौर की कविता है। सारा दायित्व कवियों एवं आलोचकों पर आ गया है। क्योंकि इसके पूर्व हिंदी कविता के समक्ष इतनी बड़ी चुनौती नहीं आयी थी। जबकि आज उसके सामने अपने अस्तित्व की रक्षा की चिंता प्रश्न है। क्योंकि दुनिया में नये-नये विचार एवं चिंतन का जो विस्फोट हो रहा है। इससे कवि दिग्भ्रमित-सा इधर-उधर की सोच रहा है। वहीं आज इस तेजी से बदलते वैश्विक जीवन के साथ कविता के परिदृश्य को समझने की जरूरत है। मानवता को बचाने का संघर्ष कवि को ही करना है।2

समकालीन हिंदी कविता के इसी परिदृश्य में कई नयी प्रतिभाएं नयी सोच, विचार, भाव एवं भाषा एवं कविता के साथ उभरी थीं। इनमें तो कई कवियों को आलोचना में जगह मिली। उनके काव्य का मूल्यांकन हुआ। वे प्रतिष्ठित हुए। और कई पूर्व से लिख रहे थे और प्रतिष्ठित थे। इसलिए इस काल की कविता में एक साथ कई पीढ़ियों के कवि लिखते दिखाई पड़ते हैं। फिर भी अस्सी के दशक में एक पीढ़ी राजेश जोशी, अरुण कमल, मंगलेश डबराल, ज्ञानेंद्रपति, वीरेन डंगवाल, विनोद कुमार शुक्ल आदि की थी। उनकी कविताओं की ओर आलोचकों की दृष्टि गयी। उनकी पहचान बनी है। लेकिन कई ऐसे और भी कवि लिख रहे थे, जिनकी कविताएं अपने समकालीनों में किसी भी स्तर पर कमजोर नहीं हैं। क्या भाव, क्या भाषा एवं क्या संवेदना के स्तर पर। उनकी सृजनात्मकता आज भी पूर्ववत जारी है। फिर क्यों नहीं आलोचकों का धयान इन कवियों की ओर गया। दरअसल, हिंदी आलोचना की परंपरा की तरह विस्मृति की भी एक परंपरा साहित्य में चलती आ रही है। आलोचक ऐसा करने के लिये ज्ञानमार्ग अपनाता है। यह ज्ञानमार्ग है अपनी पंसद एवं प्रिय-कवियों का चयन करना और उनकी कृतियों को आलोचना के योग्य समझना। अन्य कवियों की ओर से दृष्टि फेर लेना। यही हुआ है इस कालखंड में लिखनेवाले दृष्टिसंपन्न, संवेदनशील एवं परिपक्व कवि भारत यायावर, शंभु बादल, अनिल जनविजय, स्वप्निल श्रीवास्तव, सुधीर सक्सेना,

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 6.551 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred ournal|

| Volume 10, Issue 2, March 2023 |

नरेंद्र पुंडरीक एवं राजा खुगसाल के अलावा अन्य कवियों के साथ। यहां हम अपने लेख को इन्ही कवियों की कविताओं तक सीमित रखेंगे।भारत यायावर (1954) बहुआयामी व्यक्तित्व के कवि हैं। समकालीन कविता के प्रमुख हस्ताक्षरों में से एक हैं। 1980 में इनकी एक लंबी कविता 'झेलते हुए' प्रकाशित हुई। इसमें कवि अपने अस्तित्व की तलाश करता दिखायी देता है। बाहरी और भीतरी अंर्तद्वंद्व के साथ कवि व्यक्ति, जीवन, समाज एवं देश की व्यवस्था से जूझता नजर आता है। वह अपने चारों ओर के फैले विराट परिवेश में जीवन-संसार और इसमें रहनेवाले लोगों के बीच अजनबी-सा पाता है। उसे चिर-परिचित लोग ही उनको प्रेत की तरह देखते हैं। लेकिन कवि के हृदय में उनके प्रति अपार प्रेम है। वह अपनी संघर्ष-धर्मी चेतना का वाहक मामूली आदमी को मानता है। वह प्रारंभिक दौर में अपने अस्तित्व की चिंता के साथ ही अपनी कविता के पक्ष को स्पष्ट भी करता है। वह इस लंबी कविता में दार्शनिक अंदाज में चीजों पर विचार करता है। भारत यायावर का मुकम्मल प्रथम काव्य संग्रह 1983 में 'मैं हूं यहां हूं' प्रकाशित हुआ। देश में इसकी खूब चर्चा हुई। लेकिन आलोचकों ने इसका उदारतापूर्वक मूल्यांकन नहीं किया। बड़े सूक्ष्म तरीके से कवि को खारिज करने की कोशिश की गयी। यही पूर्वाग्रह एवं दुराग्रह दृष्टि इनकी पीढ़ी के अन्य रचनाकारों के साथ अपनायी गयी। इसी तरह 1990 में 'बेचैनी', 2004 में 'हाल बेहाल' एवं 2015 में युवा कवि गणेश चंद्र राही द्वारा संपादित 'तुम धरती का नमक हो' कविता संग्रह प्रकाशित हुआ है। इन कविताओं में ग्रामीण संवेदना, मामूली आदमी के जीवन, उनके सुख-दुख, संघर्ष, अर्द्धनिद्रा से जागता हुआ समाज है, इतिहास के गोरखधंधों में फंसे लोग हैं, पिता की बदहाली, माता का स्नेह, बहन का दुलार, इंसानियत को बचाने की चिंता, व्यक्ति के संपन्न होने पर उनके भीतर से खत्म होती कोमलता और उसकी जगह विध्वंसक सोच का जन्म, इंसान को बेहतर बनाने वाले सपने और विषमता से भरे समाज को बदलने की बेचैनी है। एक रोटी का प्रश्न किस प्रकार पूरी व्यवस्था के लिये चुनौती बन जाता है। और जब इस प्रश्न के समाधान के लिये लोग आवाज उठाते हैं तो यह पूरी व्यवस्था राक्षस की तरह उसके खिलाफ किस तरह खड़ी हो जाती है, उसकी सारी सुविधाओं को लीलने के लिए तैयार हो जाती है, इस कठोर सच्चाई की अभिव्यक्ति हुई है। यहां साम्राज्यवाद का अदृश्य पंजा किस प्रकार भारत की जनता को अपनी गिरफ्त में लेने के लिए बढ़ रहा है और अमेरिका के नेतृत्व में दुनिया के विकासशील देश किस तरह उसकी विकास की नीतियों में भ्रमित होते हैं, भारत यायावर की कविताओं से जाना जा सकता है।कवि ने 'मैं हूं यहां हूं' कविता में वह किसके साथ है, अपनी पक्षधरता को स्पष्ट किया है। वह यह बताना चाहता है कि उसके सरोकार क्या हैं और किन लोगों के पक्ष में खड़ा है। यह कविता घोषित करती है कि कवि संघर्षधर्मी चेतना के साथ खड़ा होना चाहता है। वह इसके लिये सुविधाओं को त्याग करेगा। उसे अनुभव एवं यथार्थ ज्ञान पाने के लिये धूल में, धूप में मीलों मील चलना स्वीकार है। लेकिन वह किसी की विचारधारा का पिछलग्गू बन कर नहीं चलेगा-4

मैं नहीं चाहता एक सिंहासन

एक सोने का हिरण

मैं नहीं चाहता एक बांसुरी

एक वृंदावन

मैं चाहता हूं भटकना मीलों-मीलों

धूल में रेत में/ धूप में ठंड में

चाहता हूं जीना

संघर्ष में, प्यास में, आग में

मैं हूं यहां हूं, यहीं रहूंगा।

यहां कवि का उद्देश्य बिलकुल स्पष्ट है। कवि मिथकों और प्रतीकों में जीना नहीं चाहता है। उसके लिये जीवन का नंगा यथार्थ ही स्वीकार है।भारत यायावर की कविताएं पाठकों को आतंकित नहीं करती हैं। इनकी कविताएं आत्मीयता, सहयोग एवं प्रेम की कविताएं हैं। ये पाठकों को समझदारी भरी अंर्तदृष्टि देती हैं। नारेबाजी और बड़बोलेपन से मुक्त करती हैं। कवि की 'सपने देखती आंखें' एक गंभीर कविता है। आज व्यक्ति सकारात्मक एवं बंधन मुक्त जीवन चाहता है। विध्वंसक एवं अराजक स्थिति से बाहर निकलना चाहता है। और समकालीन कविता का यह मुख्य स्वर भी है। अपनापन, भाईचारा, मैत्री और सहज भावबोध इनकी कविता का मानवीय पक्ष है। 'सपने देखती आंखें' में कवि कहता है-6

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 6.551 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred ournal|

| Volume 10, Issue 2, March 2023 |

सपने देखना चाहिये

सपने जो हमें सही-सही सरोकारों से जोड़ते हैं

सपने आंखों की तरह ही कीमती है।''

यहां कवि सपने को बंधन से मुक्ति के लिये शक्ति के रूप में देखता है-

सपनों में आंखें डूबी हैं
क्या अच्छा है

मुक्ति का बल इस बंधन से बंधा हुआ है

दुनिया से अपनापन इससे सजा हुआ है।''

कवि जीवन की सहजता में, उसके संघर्ष और जिजीविषा में, सादगी और बेहतर भविष्य के स्वप्न में सौंदर्य को देखता है। अपने परिवेश के प्रति इतने संवदेनशील हैं कि वह कविता में हर छोटी-छोटी घटना, विचार और सोच को दर्ज करना चाहता है। कविता में जिस प्रकार जीवन के यथार्थ एवं मार्मिकता का सूक्ष्म चित्रण हुआ है, उसी प्रकार स्मृतियों का इसमें विराट संसार भी है। आज का कवि स्मृतियों के माध्यम से संपूर्ण मानवीय संबंधों- प्रेम, मधुरता, आत्मीयता, करुणा को बचाना चाहता है। यह लोक जीवन एवं संस्कृति का अभिन्न अंग है। कवि इस भावबोध को 'नहीं छूटता घर' कविता में इस प्रकार व्यक्त किया है-8

घर का एक इतिहास है

जर्जर और धूल खाया इतिहास!

जिसके पन्नों पर अब भी मेरे जीवन की

कितनी कठिनाइयों से भरी

कहानियां लिखी हैं!
इस प्रकार हम देखते हैं कि भारत यायावर का रचना-संसार जीवन के बहुविध चित्रों से संपन्न है। उसमें जीवन का अंर्तद्वंद्व है। युगीन परिस्थितियों का सहज अंकन है। साधारण मनुष्य के प्रति गहरा अनुराग है। विकृत सभ्यता एवं संस्कृति की आलोचना है। एक आदिम अंधेरा है जो पूरी मानवजाति का सदियों से पीछा करता आ रहा है। कवि उससे मानव को मुक्ति दिलाना चाहता है। क्योंकि अज्ञानता के कारण लोग अपनी जीवन स्थितियों को न तो समझ पाते हैं और न इसे बदलने के लिये खड़े हो पाते हैं। भारत यायावर की कविता आम आदमी में एक बौद्धिक समझदारी पैदा करती है, उसे उग्र नहीं बनाती, बल्कि आत्मीयता एवं संवेदनशील होकर समस्याओं का निदान का मार्ग दिखाती है। उनकी कविता में चंदर का, चंदा केसरवानी के लिये, बीनू, दोस्त, किस्सा लंगड़ पांडे का, इदरीश मियां जैसे चरित्र लोक जीवन के मूल्यों के प्रतीक हैं। ये चरित्र संवेदनाओं से भरे हैं। कविता में आने के बाद ये व्यक्ति नहीं रह जाते हैं, बल्कि समाज के प्रेरित करनेवाले भाईचारे एवं मानवता के प्रेरक बन जाते हैं। इनकी समग्र कविताओं का विवेचन आज जरूरी है। क्योंकि आज इनकी कविताओं की प्रासंगिता बढ़ गयी है।शंभु बादल 1945 समकालीन हिंदी कविता के प्रमुख कवि हैं। लगभग चार दशकों से कविता लिख रहे हैं। किसी परिचय के मोहताज नहीं है। इनकी कविता ही पाठकों को अपना परिचय देती हैं। हां, इनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर बहुत कम लिखा गया है। जो चिंता का विषय भी है। इनकी पहली लंबी कविता 'पैदल चलनेवाले पूछते हैं' 1986 में प्रकाशित हुई। इसमें मुख्य नायक सेरा है। जो विभिन्न परिस्थितियों से जूझता है। अपना अस्तित्व बचाने के लिये हर प्रकार का काम करता है। होटल का बैरा बनने से लेकर सूअर चराने तक। वह एक बेरोजगार युवक है। लेकिन कवि को उसमें कई संभावनाएं नजर आती हैं। उसके बारे में कवि कहता है-10

तुम

कालिक हस्तक्षेप हो

पार्थिव उपज हो

आकाशी सृष्टि हो

शारीरिक चेतना हो

नगाड़े की आवाज हो

जीवित हर्ष हो।

उसके बाद इनकी 'मौसम को हांक चलो' कविता संग्रह 2007 में आया। इनका तीसरा काव्य संग्रह 'सपनों से बनते हैं सपने' 2010 में आया। इन तीनों काव्य संग्रह की कविताओं से गुजरने पर कवि के विचार एवं चेतना में काफी उतार-चढ़ाव होता दिखायी पड़ता है। युगीन चेतना और संदर्भ किसी कवि की रचनाशीलता को अधिक यथार्थ बनाते हैं। देश में वैश्वीकरण, निजीकरण, बाजारवाद की अवधारणा भले ही अर्थशास्त्र क्षेत्र की पारिभाषिक शब्दावली हों लेकिन इसने आज संपूर्ण दुनिया की राजनीति, समाज, संस्कृति, साहित्य, भाषा, ज्ञान-विज्ञान-चिंतन के विविध क्षेत्रों को गहराई से प्रभावित किया है। इसने जीवन मूल्यों की जड़ों को हिलाने में कोई कोर कसर नहीं छोड़ा है। एक तरह से आधुनिक मानव समाज के समक्ष जीवन और प्रकृति की रक्षा की चुनौती खड़ी हो गयी है। विकास और विनाश की प्रक्रिया साथ-साथ क्रियाशील है। व्यक्ति इस बाजार में पण्यवस्तु बन गया है। लोकतांत्रिक मूल्यों की जगह निजी स्वार्थ एवं सुविधाओं को जुटाने में पूरा तंत्र मानो एक हो गया है। आर्थिक रूप से संपन्न होने वाले लोग साधारण इंसान से दूरियां बनाकर जीने लगे हैं। कहने का अर्थ है कि प्रेम, आत्मीयता, सहयोग, भाईचारा का हश्र हुआ है। वहीं दूसरी ओर मजदूरों, किसानों, बेरोजगारों की फौज खड़ी हो गयी है। भला चिंता के इन विषयों से कोई भी संवेदनशील कवि अपनी आंखें मूंद कर कैसे खामोश रह सकता है। उसकी चेतना में विचारों की तरंगें उठती रहती हैं। वह इस बदसूरत होती जिंदगी को परिवर्तन के माध्यम से नये सिरे से रचना चाहता है।शंभु बादल जूझारू जनता एवं संघर्षधर्मी चेतना के साथ ही सामाजिक बदलाव के कवि हैं। सामाजिक परिवर्तन को क्रांति की आंख से देखते हैं। उनकी कविता शोषित- उत्पीड़ित-दलित जनता के प्रति न केवल सहानुभूति रखती है बल्कि उसे संगठित करने की प्रेरणा भी है। जिससे पूंजीवादी शक्तियों का मुकाबला किया जा सके। मार्क्सवादी चिंतन इनकी दृष्टि की ताकत है। 'मौसम को हांक चलो' कविता में जीवन विरोधी शक्तियों के विरुद्ध कवि का तेवर देखें-12

दुनिया को जीतने की आकांक्षा

जगी है सम्राट में

धन पर लोटते हैवान में

प्रतिरोधी अस्त्रों से महाक्रमण को किल करो!

आवाज कौंधती है।

समकालीन कविता में विद्रोह के ये स्वर शंभु बादल की कविताओं में सर्वाधिक है। यहां बदलाव के न केवल प्रतिरोध के स्वर हैं बल्कि हथियार उठाने, हमला करने, तोड़फोड़ करने, गुरिल्ला नायक पैदा करने जैसे जनसंघर्ष के विविध रूप मिलते हैं। कवि की क्रांतिकारी चेतना विरोधियों के प्रति काफी उग्र है। इस संग्रह की दर्जनों कविताएं- 'रचनाकार और जनता', 'महायुद्ध', 'तानाशाह', 'बाज और चिड़िया' क्रंति एवं बदलाव के भावबोध से लबरेज हैं। लेकिन इस सत्य से भी इनकार नहीं किया जा सकता है कि आज कविता में किसी प्रकार की नारेबाजी और छद्म क्रांति की बात कर जनता को गुमराह करना कविता के साथ न्याय करना नहीं हैं। खोखले नारे का हश्र इस देश की जनता दशकों से देखती चली आ रही है। साधारण जनता से कट कर कोई भी कविता इतिहास में टिक नहीं सकती। आज इस प्रकार की 'लॉउडनेस' वाली कविताओं से पाठकों ने किनारा कर लिया है।'सपनों से बनते हैं सपने' कविता संग्रह की कविताएं कुछ हटकर हैं। इसमें कवि का स्वर थोड़ा बदला है। समाज एवं घटनाओं के प्रति संवेदनशीलता जगी है। पत्नी, बच्चे, ग्रामीण चरित्र आए हैं जो कवि की बदली हुई मानसिकता को दर्शाती है। हिंदी के सुप्रसिद्ध कवि केदानाथ सिंह ने इस काव्य संग्रह की भूमिका में कहा है कि- ''झारखंड की उथल-पुथल भरी पृष्ठभूमि से समकालीन हिंदी कविता के परिदृश्य में जो रचनाकार उभर कर आये हैं उनमें शंभु बादल का चेहरा थोड़ा अलग दिखाई पड़ता है'' उनकी यह विशिष्टता दरअसल उनकी कविता की सामाजिक परिवर्तन की चाह और संघर्ष-धर्मी

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 6.551 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred ournal|

| Volume 10, Issue 2, March 2023 |

जनचेतना के कारण है। एक ओर कवि बाजारवाद को साम्राज्यवादी ताकतों का हथकंडा समझता है। जो पूरी दुनिया को अपनी मुटठी में कर चुका है। उसके प्रति तीव्र आक्रोश है। तेजी से बढ़ते और फैलते बाजारों की इस दुनिया को लेकर कवि काफी चिंतित है। लेकिन कवि जब लोक जीवन से जुड़ता है तो उसका हृदय से प्रेम की धारा झरने की तरह फूट पड़ता है। उसकी श्रद्धा और आत्मीयता मानो चरम को छूने लगती है। उनकी एक महत्वपूर्ण कविता है- 'नदी में कोई कंकड़ न डाले'। इसमें महापर्व छठ के अर्घ्य देने के वक्त किसी भी तरह खलल नहीं डालने का राहगीरों से निवेदन है। कवि जल को खिदोर नहीं देखना चाहता है। क्योंकि इसी जल का अर्घ्य देना है। इस शुभ कार्य के प्रति यहां कवि की निष्ठा व्यक्त हुई है जो उनके लोक जीवन के प्रति प्रेम को दर्शाता है-14

नदी पार जाने वाले मौलाना भाई!

जरा ठहरो

थोड़ी देर में जाना

मेरी मां

मेरी पत्नी पूजा कर रही हैं!

वे परवैतिन हैं

जल्द सूर्य भगवान को

अर्घ्य देंगी।

कवि की चेतना में यह सांस्कृतिक एवं धार्मिक आस्था का उदय है। इसी तरह 'चहकती चिड़िया,' 'स्मृति की घंटी', 'सूरज', 'चेतना के नयन', 'शिमला' जैसी कविता कवि की अलग मूड की कविता है। इनमें प्रेम, सहानुभूति, आत्मीयता की संवेदना काफी सघन है। यहां विध्वंस की जगह सृजनात्मक चेतना की अभिव्यक्ति हुई है। दाम्पत्य प्रेम की संवेदना 'चहकती चिड़िया' में बड़े ही मार्मिक ढंग से व्यक्त हुयी है। यद्यपि कवि चाहता तो इस प्रेम संवेदना को सीधी सरल भाषा में भी व्यक्त कर सकता था, प्रतीकों का सहारा लेने की जरूरत नहीं थीं। क्योंकि यह कविता कवि की जिंदगी से निःसृत है। यहां प्रेम की निश्छलता है और बिछुड़ने की पीड़ा भी। कवि कहता है-1

चिड़िया की कोमल चोंच में

तिनका था

चिड़िया ने बड़े यत्न से

बड़े प्रेम से

एक घोंसला बनाया

हम दोनों साथ साथ

घोंसले में रहने लगे

सुबह हुआ-न हुआ

चिड़िया/ उड़ गयी

देखते ही देखते

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 6.551 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred ournal|

| Volume 10, Issue 2, March 2023 |

आकाश दूर

बादलों से आगे

चांद-तारों के उस पार

गुम हो गयी चिड़िया

रह गयी चिड़िया की छवि

रह गया घोंसला

खाली, उदास

लोगों की नजर

जब घोंसले पर पड़ती है

चिड़िया याद में चहकती है।2

जीवन साथी के साथ गुजरे क्षण उस चिड़िया की तरह है जो एक ही घोंसले में रहते हैं और प्रेम करते हैं। लेकिन जीवन के ये संबंध बहुत स्थायी नहीं होते। साथ छूटते ही दूसरे के पास उसकी मात्र स्मृति ही शेष रह जाती है। आज की कविताओं में प्रेम, स्मृति, प्रकृति, आत्मीयता के भाव अधिक होने के कारण पाठक को अपने साथ जोड़ने में सफल हो पा रही हैं। शंभु बादल की कविताएं समकालीन कविता में अलग स्वर से मौजूद हैं। इनका मूल्यांकन अभी तक नहीं हुआ है।वरिष्ठ कवि अनिल जनविजय (1957) विगत तीन दशकों से समकालीन हिंदी कविता को अपनी बेहतरीन कविताओं से समृद्ध एवं सशक्त कर रहे हैं। उन्होंने जीवन-संघर्षों के कई कठिन दौर देखे हैं। कठिनाइयों को झेला है, टूटा है, बिखरा है और पुनः स्वयं को बेहतर स्थितियों में लाकर खड़ा भी किया है। उनकी जिंदगी रोजी-रोटी के लिये शहर-दर- शहर भटकती रही है। फिलहाल रूस में सपरिवार रहते हैं। वे प्रवासी भारतीय के रूप में जाने जाते हैं। लेकिन इनकी चेतना के रंग में भारतीयता इस तरह घुली हुई है कि इसे देह एवं प्राण की तरह अलग नहीं किया जा सकता है। ये समकालीन हिंदी प्रमुख कवियों में एक हैं। इनकी कविताओं में जन जीवन की समस्या, संघर्ष, भ्रष्ट-व्यवस्था की सच्चाई को उजागर करना और प्रेम की संवेदना मुखर है। अनिल जनविजय एक मायने में प्रेम संवेदना के ही कवि है। यह प्रेम विविध रूपों में प्रकट हुआ है। इसे दोस्त के रूप में, प्रेमी के रूप में घर-गृहस्थी के रूप में देखा जा सकता है। इनकी कविताओं का पहला संकलन भारत यायावर के संपादन में निकलनेवाली पत्रिका 'विपक्ष सीरीज' के अंतर्गत- 'कविता नहीं है यह' नाम से 1982 में प्रकाशित हुआ था। उसके बाद 1990 में कवि उदय प्रकाश के आग्रह पर 'मां, बापू कब आयेंगे' पुस्तक आयी। 2004 में 'रामजी भला करें' और 2015 में 'दिन है भीषण गर्मी' का काव्य संग्रह आया है। कवि की ये पुस्तकें इस बात की गवाह हैं कि वे लगातार लिखते रहे हैं। इनमें दिशाहीनता नहीं, बल्कि मानवीय रागात्मक बोध का विस्तार हुआ है।अनिल जनविजय का कवि भारतीय समाज में युगों से चली आ रही स्त्री-पुरुष की सामंतवादी पुरुष सत्तात्मक विचारधारा को तोड़ता है। कवि समाज में पुरुषों से अधिक औरतों को मान देने लोगों से अपील करता है। क्योंकि उनके पास ही आज इस संवेदनहीन होती जा रही दुनिया को बचाने की क्षमता है। वह स्त्री को दासी मानने की जगह रचना का प्रेरणा स्रोत, सूर्य की उष्मा, उर्जा का उदगम, जीवन का हर्ष, उल्लास और ममता का निर्द्वंद्व सर्जक मानता है। वह अपनी कविता प्रार्थना में इस अधिकार की मानो वकालत करता है और पुरुषों को अपनी सोच को बदलने के लिये राजी करता है-3

हे पुरुष!

एक ही प्रार्थना है तुमसे

यह हमारी दुनिया

औरतों के हाथों में दे दो

अगर तुम सुरक्षित रखना चाहते हो इसे

अपनी आनेवाली पीढ़ी के लिये।

स्त्री को परिवार कह कर भी संबोधित किया जाता है। इसका एक कारण तो यह है कि उसके ही कंधों पर घर-गृहस्थी की सारी जिम्मेवारी होती है। खाना बनाने से लेकर घर की साफ-सQाई, गंदे कपड़ों की धुलाई, बच्चों की सेवा सुश्रुषा तक करना पड़ता है। और यदि वह एक दिन भी घर से किसी कारणवश बाहर चली जाय तो पूरा घर-संसार उदास सा लगता है। कवि ने स्त्री के बिना घर की उदासी का चित्रण कितनी संवेदनशीलता से किया है-
आज वह नहीं है

घर उदास है

अलगनी पर लटके हें गंदे कपड़े

फर्श पर जमी है धूल

मेज पर पड़े हैं तीन सूखे गुलाब के फूल

गंदे बर्तनों का ढेर है रसोई

बुझी हुई अंगीठी में राख भरी है।

अर्थात घर में सन्नाटा है। चीजों को हिलाने-डुलानेवाला कोई नहीं है। घर का सारा काम एक औरत के बिना किस प्रकार जहां का तहां रुका रह जाता है, यह कविता उसका साक्ष्य प्रस्तुत करती है। अनिल जनविजय केवल प्रेम संवेदना के ही कवि नहीं है, बल्कि राजनीतिक छद्म और सामाजिक विषमता के खिलाफ संघर्ष करता है। साधारण लोगों में वर्गीय समझ विकसित होते देख कर अपनी कविता को उनके साथ चलने और परिस्थितियों से बाहर निकलने का आह्वान करता है-5

कविता नहीं है यह

बंद पपड़ाए होंठों की भाषा है

लहराती झिलमिलाती हुई गतिमान

बाहर आने की तैयारी में।

वह मजदूरों का चुहचहाता पसीना है। छिली हुई चमड़ी की फुसफुसाहट है। मजदूरों के हाथों में हथौड़ा है। कवि के पास जीवन, समाज एवं देश-दुनिया को लेकर कोई भ्रम नहीं है। अपनी बात सीधा उस वर्ग से कहता है जिन्हें आज तक सदियों से सताया जाता रहा है। बीसवीं सदी भयानक परिदृश्य वाली सदी थी। इसमें क्रूरता, युद्ध, मौत, हथियारों का बाजार क्या-क्या नहीं समाया था। जो जीवन के खिलाफ उपयोग आनेवाले थे। विध्वंसक एवं विस्फोटक सामग्री से भरी सदी थी। कवि जीवन के सौंदर्य, उसके प्रेम एवं भाईचारे को कविता में बचाना चाहता है। कविता में कटुता की जगह आत्मीयता चाहता है। इसलिये कवि इस गुजरती सदी को पूरे उत्साह के साथ विदा करता है-7

जाओ जाओ

बीसवीं सदी जाओ जाओ

अपने साथ ले जाओ तुम

युद्ध और

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 6.551 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred ournal|

| Volume 10, Issue 2, March 2023 |

क्रुद्ध इस दुनिया के आवेश

दुनिया के देशों को बांटे जो

हथियार का जखीरे का

वह भयानक परिवेश।

अनिल जनविजय नये समाज के सृजन के कवि हैं। उनका प्रयास समाज को बदलने का रहा है। वह चाहता है बदहाल जीवन के बदलाव में प्रकृति और मनुष्य का सहयोग साथ-साथ मिले। इसलिये कवि नीम, बबूल, नदी, झील, तालाब, सूरज का नयी दुनिया के निर्माण के लिए अपने पास बुलाता है। 'कवि तुम भी आओ' कविता में कहता है-9

मैं जमीन बना रहा

नीम और बबूल उगाता रहा

तालाब और झील के पानी को

उबालता रहा

सूरज बनाता रहा अपने ही बीच

निरंतर रोशनी के लिये

आओ

तुम भी

जमीन बन जाओ ।

कवि कल्पना के लोक में जाकर सृजन के बीज नहीं ढूंढ़ता, बल्कि अपने परिवेश में बिखरी हुई प्राकृतिक एवं सामाजिक शक्तियों को जगाने में विश्वास करता है। अनिल जनविजय की काव्य यात्रा अब भी जारी है। उनकी मानवीय संवेदना जीवन के प्रति और गहनतर होती जा रही है। तुकबाजी और नारेबाजी से मुक्त है इनकी कविता।11

स्वप्निल श्रीवास्तव (1954) ग्रामीण परिवेश एवं संवेदना के सशक्त कवि हैं। इनकी कविताएं ग्रामीण परिवेश, लोकाचार, आस्था, विश्वास, प्रेम, आत्मीयता के साथ उभर कर आयी हैं। इनमें जीवन की विविधाता और उसके सौंदर्य हैं। इनकी कविताएं लोकजीवन से रस ग्रहण करती हैं। ग्रामीण संस्कार, सामाजिक जीवनबोध स्वभाविक रूप से कविता में उभर के आए हैं। वहां के जीवन यथार्थ के कई चित्र इन्होंने उकेरे हैं। समकालीन कविता के ये सशक्त कवि हैं। इनका पहला काव्य-संग्रह भारत यायावर द्वारा संपादित पत्रिका 'विपक्ष सीरीज' के अंतर्गत- 'ईश्वर एक लाठी है' नाम से 1980 में प्रकाशित हुआ। उसके बाद 1998 में 'ताख पर दियासलाई', 2004 में 'दूसरी पृथ्वी के लिये' और 'जिंदगी का मुकदमा' एवं 'जब तक है जीवन' कविता संग्रह आया। संग्रह की कविताओं में उनका ग्रामीण बोध, साधारण आदमी का जीवन, घर परिवार, पिता, दादा सगे-संबंधियों का एक ऐसा संसार है जो समकालीन कविता में इनकी अलग से पहचान दिलाते हैं। पिता के कंधों पर बैठ कर मेला देखने जाने की स्मृतियां हैं। महुए के फूल हैं, वर्षा में भीगते धान हैं, गीली-गीली पगडंडियों पर सांचे की तरह छप गये पदचिन्ह हैं। कवि अपनी सांस्कृतिक जड़ों सें पेड़-पौधों की तरह जुड़ा हुआ दिखायी पड़ता है। उनकी एक कविता है-' धान का खेत'। इस कविता में कवि स्वप्निल श्रीवास्तव ने कृषि जीवन से जुड़े सुंदर जीवन का चित्रण किया है-

वर्षा में भीगते हैं

धान के खेत

हरे रंग की साड़ी में भीगती है युवती

युवती के मन के भीतर

युवा हो रहा है हरापन

धान के खेत में हवाओं की तरह

टहल रहे हैं बादल

वर्षा का जल मेड़ से ऊपर होकर बहता है

धान की फसल देख कर

गांव -गिरांव खेत-खलिहान

बड़े-बूढ़े बच्चे प्रसन्न हैं

धान के खेत पर महाजन की दृष्टि है!

महाजन क्या फसल को अपने खलिहान में ले जायेगा?

यह सोचकर उदास हो जाते हैं धान के खेत।'

किसानों की जिंदगी से जुड़ा है कपास। यह उसकी मर्यादा का रक्षक है। गुलाब के फूल की जगह कवि कपास के फूल को पसंद करता है। उसे ही लगाना चाहता है। लेकिन इसकी बेल नहीं होती। इसका पौधा होता है। खैर, व्यक्ति के जीवन में जो गतिशीलता पैदा करे, जिसमें मेहनत की गंध है और संघर्ष है, कवि उन्हीं चीजों को पसंद करता है। गुलाब सुख, ऐश्वर्य और विलासिता को बढ़ावा देता है। यहां कवि की चयन दृष्टि किसान की है। वह कहता है-13

मैं अपने आंगन में

गुलाब के पौधों की जगह रोपूंगा कपास की बेल

उसकी टहनियों और पत्तों से

जी भरकर प्यार करूंगा

गुलाब की गंध शिथिल कर देती है आदमी को

गुलाब का नहीं होता है कोई भविष्य

डाल से अलग होने के बाद

कपास के फूल जब खिलते हैं

फूलों के बगीचे

नन्हें-नन्हें अनुभवी हाथ

चुनते हैं कपास के फूल।

उनकी एक महत्वपूर्ण कविता है 'राजा और प्रजा'। यह कविता उस तंत्र को बेनकाब करती है जो मेहनतकश जनता को महज भेड़ समझता है। लेकिन दुखी, भूखी यह प्रजा गुस्से को उस समय पीकर कर रह जाती है जब राजा उसकी मेहनत नहीं देकर उसकी हथेली पर थूक देता है-

प्रजा भेड़ है

जिधर चाहे हांक दे राजा

प्रजा दुख सहती है

भूखी रहती है

घाम-बतास में परिश्रम करती है

जब मजदूरी मांगने आती प्रजा

तो उसकी हथेली पर नफरत से थूक देता है राजा

प्रजा बिना गुस्से से लौट आती है।

इसी तरह दबे कुचले मेहनकशों के साथ अन्याय होता आ रहा है और जनता अपमान का घूंट पीकर सदियों से चली आ रही है।

वर्तमान जिंदगी में बनावटीपन ज्यादा है। दिखावे की इस संस्कृति ने व्यक्ति को बहुरूपिया बना दिया है। पूर्व की तरह न उसके जीवन में न तो सहजता है और न सरलता। ऐसे में कवि अपनी मौलिकता को खोज करता है। यह मौलिकता उसे पेड़ों, पौधों या कहें प्राकृतिक-जगत में मिलती है। इससे कवि को शर्मिंदा होना पड़ता है। सामाजिक जीवन हो या निजी जीवन व्यक्ति की कृत्रिमता सभी जगह देखी जा रही है। उसे अपना भविष्य भी संकटग्रस्त दिखायी पड़ रहा है। इसका कारण जीवन विरोधी शक्तियों की बाज रूपी फौज ने चारों तरफ से घेर रखा है। कवि 'तरु-पुरुषों के लिए' कविता में अपनी मौलिकता खोने के कारण क्षमा मांगता है-14

मेरे तरु-पुरुषों मुझे क्षमा करना

मैं अपने परिंदों के साथ, नहीं

आ सकता, तुम्हारे पास

मेरे चारों ओर बाजों की एक फौज है

उनकी नुकीली चोंच में टंगा

है, मेरा भविष्य।

आज इंसान की जिंदगी ही काली ताकतों के चंगुल में फंस गयी है। इस बाजारवाद ने मनुष्य की औकात का सौदा किया है। जिसका अपना स्वाभिमान होता था। उसका गौरव, संस्कृति और इतिहास आज इस बाजार में कोई मायने नहीं रखता। आदमी की कीमत ही सबसे बड़ी ऐतिहासिक उपलब्धि माना जा रहा है। क्योंकि यहां उसके चेहरे, हंसने, गाने, रोने, नाचने, चूमने, हिंसा, लूट, हत्या कर गतिविधि के अभिनय का पैसा मिलता है। इसमें हर वर्ग के व्यक्ति बिकने के लिये शामिल है। जिसने अपने आपको कभी नहीं बेचा यहां खुशी-खुशी से बिकने के राजी है। इसके लिये उन्हें शर्म नहीं आती है। यहां उन्हें उनकी अपेक्षा से अधिक पैसे मिल रहे हैं। मानव मूल्यों की कोई कीमत हो सकती है। प्रेम, स्नेह, सहानुभूति, हंसी, खुशहाली, स्वप्न बेचने लायक चीजें हैं। लेकिन साबुन, कपड़ा, जूता, चप्पल,

तेल, नमक, हल्दी की तरह ये सब खुलेआम बाजार में बिक रहे हैं। कवि इस मुनाफाखोर बाजारतंत्र से आहत है। कवि ने 'बिकना' कविता में इस कटु यथार्थ को इस प्रकार दर्शाया है-

जो कभी नहीं बिके नहीं थे

वे इस बार के बाजार में बिक गए

सौदागर ने उनकी जो कीमत मुकर्रर की

वह उनकी औकात से ज्यादा थी

इसलिये वे खुशी खुशी बिक गए ।'

स्वप्निल श्रीवास्तव अपने परिवेश की हलचलों के प्रति जागरूक हैं। उनके पास देश दुनिया के बदलते हालात को समझने की अंतर्दृष्टि हैं। भाषा सहज और सरल है।

सुधीर सक्सेना (1955) समकालीन हिंदी कवियों में किसी परिचय के मोहताज नहीं हैं। उनकी कविताओं में अपने समय और समाज के यथार्थ व्यापक स्तर पर चित्रित हैं। सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक समस्याओं से घिरे इंसान की पीड़ा, उसकी छटपटाहट और राष्ट्र-विरोधी ताकतों के खिलाफ आवाज दर्ज है। इनकी कविताओं में व्यक्ति के सुख-दुख, आशा एवं प्रेम जिंदा है। ये अपने समकालीनों में विशिष्ट अंदाज के किंतु मानवीय संवेदना से भरे कवि हैं। 1990 में उनका पहला कविता संग्रह ' बहुत दिनों के बाद' आया। उसके बाद उनका 1997 में 'काल को भी नहीं पता' और 'समरकंद में बाबर' काव्य-संग्रह आया। इन कविताओं में सामाजिक, राजनीतिक, वैश्विक, धार्मिक जीवन के कटु यथार्थ हैं। कवि कहीं समझौतावादी नहीं है। उनकी भाषा ढंकी छुपी राजनीति की बुराइयों को उघाड़ कर रख देती है। कवि केवल स्थानीय जीवन के प्रति ही जागरूक नहीं है, बल्कि देश एवं दुनिया में घटनावाली बड़ी घटनाओं पर भी स्थल विशेष के रूप में कविता लिखता है। ये कविताएं किसी न किसी सामाजिक, ऐतिहासिक, धार्मिक घटनाओं की याद दिलाती हैं। इनमें कवि की चिंता मुखर रूप से प्रकट हुई है। इससे उनकी चेतना की व्यापकता का अंदाज लगाया जा सकता है। उन्होंने इन स्थलों पर शृंखलाबद्ध कविताएं लिखी हैं। इनमें अयोध्या, मुंबई, पेइचिंग, बीकानेर जैसे नाम शामिल हैं। विकास एवं समृद्धि के साथ साथ धार्मिक उन्माद के शिकार भी यह शहर रहा है। यहां लोकतांत्रिक मूल्यों एवं मानवीय संवेदना की धज्जियां उड़ी है। मुंबई और अयोध्या दंगों के लिये कुख्यात रहा है। जन-जीवन को रौंदा गया है। कवि इन शहरों को विषय बना कर एक साथ कई विचार संवेदनाओं की ओर से संकेत करता है। इनकी समरकंद में बाबर कविता संग्रह काफी चर्चित हुआ था। ये लगभग तीन दशकों से लगातार लिखते आ रहे हैं। लेकिन हिंदी आलोचना ऐसे वरीय प्रतिभाशाली कवियों की ओर कभी मुखर नहीं हो सकी।12

सुधीर सक्सेना का कवि मनुष्य जीवन पर होनेवाले किसी भी तरह के अमानुषिक हमले से अंतर तक हिल जाता है। समाज में भय एवं आतंक ने ऐसा माहौल पैदा कर दिया है कि रात में घर-परिवार के बच्चे अशांत रहते हैं। मानो उनकी नींद ही छीन ली गयी है। आतंक का क्रूर चेहरा व्यक्ति को जान बचाने के लिये अज्ञात शक्तियों की शरण में ढकेल देता है। इस आतंक ने आज की जिंदगी में अंदर तक पैठ बना लिया है। और पृथ्वी का हर इंसान इस दानवी शक्ति से कांप रहा है। ये कभी भी व्यक्ति पर हमला बोल सकते हैं। चाहे वह घर में सोया हो या प्रार्थना कर रहा हो। कवि यहां 'काल को भी पता नहीं' कविता में मर्माहत होकर इस सत्य को उजागर करता है-

दरवाजे पर हाथ नहीं बजते

पसलियों में धाड़-धाड़ बजता है भय बेमिसाल

कल तक अजनबी

आज इतना परिचित

मानो जन्मा हो साथ-साथ

दस्तक हुई नहीं

रात-बिरात

कि बच्चे को भींच लेता है पिता

मां बुदबुदाती है अस्फुट प्रार्थना।''

अपने समय का भयावह चेहरा देखकर कवि चिंतित है। हर तरफ असुरक्षा के वातावरण का निर्माण किया जा रहा है। व्यवस्था अपनी सत्ता को सुरक्षित रखने में पूरे शासन तंत्र को झोंक रही है।

समकालीन कविता में एक ओर जहां तनाव, संघर्ष, दुख, तकलीफ, परिवर्तन की चेतना है, वहीं दूसरी ओर मानव जीवन में गहरी आशा और आस्था भी है। दुनिया में बुराइयों का अंत नहीं है। जीवन को आघात पहुंचाने वाली परिस्थितियां हमेशा किसी न किसी रूप से घेरी रहती हैं। कवि इस संसार में इन विध्वंसक परिस्थितियों में आशा, प्रेम और सृजन का दामन नहीं छोड़ता है। मनुष्य को जीवित रहने की उम्मीद प्रकृति के उपादानों- पेड़-पौधों, उसके पत्ते की हरियाली, नदी, जल से बंधी है। सुधीर सक्सेना का काव्य-संसार एक मायने में आस्था, विश्वास एवं आत्मसंबल का विराट संसार है। यहां आशा एवं विश्वास के लिये उनकी कविता 'सुहान है अभी धरती' रहेगी। कवि इसमें पूरी आस्था के साथ कहता है। यह उम्मीद पत्तियों में चुटकी भर क्लोरोफिल, मुटठी भर दाने, पडोस की नदी में जल, चूल्हे में राख, गांव के पूरब में गाछ और उस पर घोंसले, हल की नई नकोर फाल, हंडिया में थोड़े से बीज एवं तकिये तले ख्वाब बच रहने से जुड़ी है। जब तक ये सारी चीजें अपने अस्तित्व के साथ धरती पर रहेंगी कवि हमें आश्वस्त करता है कि हमारा अंत संभव नहीं है-13

बुरा समय है यह

लेकिन इतना बुरा भी नहीं मियां

कि जीने को जी न चाहे

जब तक शेष है

पत्ती में चुटकी भर क्लोरोफिल

और क्लोरोफिल की चक्की में

मुटठी भर के दाने और कवि अंत में निष्कर्ष के रूप में कहता है-

जब तक पायताने हैं समय

और सिरहाने तकिये तले ख्वाब

तब तलक/ सुहागन है धरती

तब तलब सौभाग्यशाली हैं

धरती के बेटे

हम और आप।

इस प्रकार हम पाते हैं कि सुधीर सक्सेना अनुभव में परिपक्व और दृष्टिसंपन्न हैं। अपने परिवेश के प्रति गंभीर एवं संवेदनशील हैं। कवि की साहित्यिक साधना रुकी नहीं है। इनकी भाषा का तेवर अपने समकालीनों में हट कर है। किसी कवि को उसकी जीवन-दृष्टि ही बड़ा बनाती है। उसके काव्य-संसार में जीवन के कितने रूप समाहित हुए हैं और कवि मानव जीवन को इस विभ्रमित संसार से बाहर निकलने का कैसी दुनिया प्रस्तुत करता है, यह उसके विवेक पर ही आश्रित है।

राजा खुगशाल (1951) समकालीन कविता के महत्वपूर्ण हस्ताक्षर माने जाते हैं। इनके पर्वत प्रदेश के जीवन संघर्ष, वहां के परिवेश और प्राकृतिक सौंदर्य इनकी कविताओं की अलग पहचान दिलाते हैं। पहाड़ी एवं मैदानी इलाकों में जीवन जीने वाले साधारण लोगों के अनुभव, विचार, मेहनत, कृषि, व्यवसाय आदि इनकी कविताओं में आते हैं। वहीं सहजता से अपनी बात कहने की भी कवि में अदभुत कला है। पौढ़ी-गढ़वाल का परिवेश इनकी रचनात्मक दुनिया एक बिलकुल नये रूप में उपस्थिति होती है। इनका पहला काव्य संग्रह 'संवाद के सिलसिले' 'सदी के शेष वर्ष' 1991 में छपा। उसके इनका दूसरा काव्य संग्रह 'पहाड़ शीर्षक है पृथ्वी के' 2012 में छपा। इनके अलावा अन्य विदेशी भाषाओं की कविताओं का अनुवाद भी इन्होंने किया है। इनकी कविताएं अपने समय के ज्वलंत प्रश्नों से टकराती हैं। चाहे रोजी-रोटी, भूख, गरीबी की बात हो या फिर पर्यावरण की समस्या। उनकी दृष्टि में जीवन में व्यापकता और उसके अंतर्विरोध कविता को यथार्थ के करीब लाते हैं। वैश्वीकरण, निजीकरण, और बाजारवाद के इस भयानक प्रतियोगिता और लूटपाट के दौर में कवि देश दुनिया में घटनेवाली चीजों पर विशेष ध्यान रखता है। वह दुनिया के बदलते चेहरे और पर्यावरण के प्रति बढ़ते अत्याचार को कविता में दर्ज करता है। बाजारवाद ने एक ऐसा तंत्र विकसित किया है जिसके प्रलोभन के साधारण -असाधारण हर वर्ग के लोग शिकार हैं। मनुष्य का स्वाभिमान से जीने वाला प्राणी है। उसके ज्ञान-विज्ञान, समाज और राष्ट्र का निर्माण दरअसल उसके विकसित जीवन दृष्टि के ही परिणाम हैं। लेकिन आज धन की अधिक चाह और उपभोग की अनंत भूख ने उसे पण्यवस्तु बना डाला है। बाजार में उसके हर्ष, दुख, पीड़ा, स्वप्न, हंसता चेहरा, रोता चेहरा, देह के अंग, आंख और आंसू सबकी कीमत मिलती है। आप जो कुछ बेचना चाहें यहां बेच सकते हैं। किसी स्वाभिमान और प्रतिष्ठा जैसे मूल्यों की यहां कोई आवश्यकता नहीं है। कवि ने इस यथार्थ को अपनी कविता 'दुनिया का चेहरा' में इस प्रकार व्यक्त किया है-14

बेहद आसान है अब चेहरा बदलना

चेहरा ओढ़ना

चेहरा बेचना और खरीदना

अब एक चेहरे के पर

कई चेहरे हैं।

बाजार का फैलता दानवी रूप हमारी पंरपरा, संस्कृति एवं मानवीय मूल्य मुनाफा कमाने के लिये निगल जायेगा। स्त्री, बच्चे एवं प्रकृति सौदागरों की आंखों से सिर्फ बाजार के लिये बिकाऊ माल से ज्यादा कुछ भी नहीं है।

संपूर्ण विश्व की साझी विरासत है पर्यावरण। आज यह असंतुलित हो गया है। दुनिया के शासकों ने अपने विकास एवं सुविधाओं के लिये विवेकहीन होकर दोहन किया है। नदी, पर्वत, वन, मिट्टी कुछ भी सुरक्षित नहीं है। धरती के अंदर और उसकी सतह पर हर चीज का विनाश हो रहा है। विकास की इस अंधी दौड़ को देखकर कवि की चिंता बढ़ गयी है। जल, वायु, समुद्र सब प्रदूषित हो गये हैं। जिंदगी के सामने आत्मरक्षा का संकट पैदा हो गया है। इसके दुष्प्रभाव लोगों के सामने आने लगे हैं। कवि इस सच्चाई के प्रति जागरूक करता है। 'पर्यावरण-दो' कविता में जीवन की भयावह स्थिति को देखें-14

कुछ लोग बांध बना गए हैं नदियों पर

कुछ लोगों ने धुएं से ढंक दिए जंगल

कुछ मास्क पहन कर निकलते सड़कों पर

कुछ लोग दूरबीन से देखने लगे

यूनियन कार्बाइड और चेरनोबिल की चिमनियां

चीखने-चिल्लाने लगे कुछ लोग

बचाइए, पृथ्वी को बचाइए

बचाइए, धरती पर मनुष्य का जीवन।

विकास की पराकाष्ठा में इंसान बच नहीं पायेगा, कुछ इसी तरह का इंतजाम दुनिया में किया जा रहा है। यह मानवजाति के लिए सबसे बड़ी चिंता का विषय है

राजा खुगशाल की कविता में साधारण लोगों के जीवन-यापन के तौर तरीके एवं उनकी कठिनाइयां भी हैं। पहाड़ी क्षेत्रों में लोग कुछ काल तक खेती करते हैं और उसके बाद भेड़-बकरियां चराने का काम करते हैं। वे इसके लिये दूर-दूर तक चले जाते हैं। जब फसल काटने का वक्त होता है तो वे पुनः अपने कृषि कार्य में जुट जाते हैं। कवि ने भोटिया जाति के इस संघर्ष को बड़े ही जीवंत ढंग से चित्रित किया है। समकालीन हिंदी कविता में इस प्रकार का जीवन बहुत कम दिखायी पड़ता है। इसका एक कारण है कि अधिकांश कवियों का महानगरों में जीवन बिताना। जो कवि साधारण जीवन के करीब रहेगा, उसके साथ कुछ पल बिताएगा निश्चित रूप से वहां उसे नये अनुभव भी मिलेंगे। किताबों में ऐसे ज्ञान नहीं होते है। वहां तो कृत्रिमता का भी भरमार है। ताजगी परिवेश और वहां के लोकजीवन में प्राप्त होती है। कवि 'भोटिए' कविता में कहता है-11

'कोई भी पर्वत

कोई भी जंगल

अगम-अगोचर नहीं है उनके लिए

उन्हें आकर्षित करते हैं पेड़ के कोमल पत्ते

अच्छे लगते हैं उन्हें

लहलहाती घासों के वन, हरे भरे झुरमुट

घास और जहां मिलते हैं भेड़-बकरियों के साथ

वे वहीं रूक जाते हैं।'

यह कविता भोटिया जाति के जीवन का साक्षात दर्शन प्रस्तुत करती है। राजा खुगशाल प्रकृति और मानव के अंतर्विरोधों के सूक्ष्य अनुभव को अपनी कविता की ताकत मानते हैं। उनकी खंडहर, बारिश के दिनों में मां, नदी ,पहाड़ पर घर, पत्थर, इक्कीसवीं सदी के दहलीज पर आदि कविताएं नयी सोच एवं चिंतन से सामान्य जन को जोड़ती हैं। सरल एवं सहज भाषा कविता को पारदर्शी बनाती है। सकारात्मक भाव बोध इस पीढ़ी के कवियों की विशेषताएं हैं। जो इन्हें पूववर्ती पीढ़ी के कवियों से अलगाती हैं। राजा खुगशाल आज भी लिख रहे हैं।

नरेंद्र पुंडरीक (1954) साधारण लोगों के जीवन और उनके सहज सामाजिक बोध के प्रति जागरूक कवि हैं। जिंदगी को देखने एवं समझने का उनके पास बिलकुल अलग नजरिया है। ये विचारों से अधिक कविता में संवेदना को महत्व देते हैं। जीवन के बहुआयामी पक्ष कविता को बहुविविधता प्रदान करते हैं। यह जीवन को समग्रता में देखने की नयी दृष्टि है। महानगरीय जीवन में प्रवेश करनेवाले कवि के जीवन से ग्रामीण संस्कृति एवं परंपरा विलुप्त हो गयी। वह कृत्रिम संसार का नागरिक बन गया है। जिसमें छद्म एवं बनावटीपन ज्यादा है। अपनी जमीन से कटे कवि की कविताओं में यथार्थ की जगह स्मृतियों के बहाने केवल नॉस्टेलजिया की अभिव्यक्ति होने लगी है। गांवों के प्रति कवि की दृष्टि भी रूढ़िवादी है। उसमें वैज्ञानिक सोच नहीं दिखायी पड़ता। ऐसे उनकी कविताएं अस्वाभाविक-सी लगती है। लेकिन नरेंद्र पुंडरीक की कविताएं बिना किसी लाग लपेट एवं सजावट बनावट के सीधे जीवन एवं उसकी मिट्टी से जोड़ती हैं। यहां स्मृतियां वर्तमान जीवन को संबल प्रदान करती हैं। उसकी ताकत से जीवन के प्रति कवि की आस्था बढ़ती है। इनकी कविता में दोस्त, प्रेम, भाईचारे को बचाने की चिंता है वहीं सामाजिक विकृतियों एवं असमानता के प्रति प्रतिरोध भी है। विश्व में बदलते जीवन के प्रति जागरूकता है। प्रेम एवं स्नेह कवि की कविता को अधिक मानवीय एवं संवेदनशील बनाते हैं। और यही समकालीन कविता को नयी पहचान भी देती है। कोई राजनीतिक नारा बनने से बचाती है। कवि का विश्वास है कि मनुष्य की इच्छाएं नहीं मर सकती हैं। इनका पहला

काव्य-संग्रह 1992 में 'नंगे पांव का रास्ता' आया। तत्पश्चात 2002 में 'सात आकाशों वाली लाड़ली, 2014 में, 'इन्हें देखने दो इतनी ही दुनिया' और ' इस पृथ्वी की विराटता में' कविता संग्रह 2015 में छपे। 'माटी' पत्रिका का संपादन भी कर रहे हैं।12

नरेंद्र पुंडरीक सघन अनुभूतियों एवं गहरी मानवीय संवेदना के कवि हैं। इनकी कविताओं में मैत्री, प्रेम, एक दूसरे के प्रति सम्मान और समय की गति में पिछड़े लोगों के प्रति आत्मीयता का बोध है। उनकी जिंदगी के संपर्क में आये लोग उनकी स्मृति में हमेशा रहते हैं। वहीं सामाजिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक चेतना से युक्त कविताएं भी हैं। मनुष्य के जीवन में व्याप्त विषमता, अत्याचार एवं बढ़ती कृत्रिमता के प्रति कवि में गहरा असंतोष है। मनुष्यता कैसे देश दुनिया में जीवित रहे और उसको कैसे जिंदा रखा जाए कवि के पास बचाने के लिये संस्मरण की टेकनीक भी है और लोगों से दोबारा जुड़ने की इच्छा भी है। यह एक प्रकार से भाव-योग है। अपनी कविता 'अब तो लगता है' में कवि अपने बाल-जीवन को याद करता है। उसमें खेला जानेवाला 'छुपा-छुपौवल' आज तक वह नहीं भूल पाता है। इस निश्छल खेल और अंकुरते मानवीय प्रेम इन पंक्तियों में व्यक्त हुआ है-

हम लड़कों का प्रिय खेल था

छुपा-छुपौवल

क्योंकि इसमें अक्सर ही

छुपा लेते थे हम

बड़ों की आंखों से

अपनी आंखों का रंग।

बाल जीवन में प्रेम से लिखी यह कवि की मानो पहली इबारत है।

दिल्ली सिर्फ महानगर ही नहीं है, बल्कि राजनीतिक राजधानी भी है। देश-दुनिया के विचारों, ज्ञान-विज्ञान एवं राजनीतिक हलचलों का भी केंद्र है। यहां कवि को आधुनिक सभ्यता की ढेर सारी कमियां नजर आयीं। कभी देखी गयी दिल्ली अब वैसी नहीं रही। क्योंकि उसमें काफी बदलाव आया है। और यह कोई बड़ी बात नहीं है। कवि दिल्ली में क्या चाह रहा था जो इस बार नहीं मिला। और जो कुछ देखा उससे हिल गया। इंसान की जिंदगी को हिलाने वाले कई कारण हैं। भूख, गरीबी, फटेहाली, फुटपाथ में घिसटते लोग, लोगों के बनावटीपन और रातों-रात बढ़ती इमारतों की गगनचुंबी ऊंचाई। कवि को दिल्ली को बदली बदली देख कर आश्चर्य हो रहा है-13

'दिल्ली में जो इस बार दिखा

वह इसके पहले

कभी नहीं दिखा

जो दिखा वह कहीं से

नहीं दिख रहा था कि वह दिल्ली है

जो मुझे अब तक कहीं नहीं मिला था

आंखें जो बरसों से चाहती थीं

वह यहां हिल रहा था

हिला रहा था

हिल कर मेरे भीतर मिल रहा था।

कवि यहां इतिहास और वर्तमान की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक के साथ ही बाजारवादी संस्कृति का आकलन कर रहा है।

नरेंद्र पुंडरीक भी अस्सी के दशक में उभरी नयी युवा पीढ़ी के सशक्त हस्ताक्षर कवि हैं। इस पीढ़ी की कविताओं ने पूर्व के कवियों की लटके-झटके वाली भाषा और बड़बोलेपन ने इनकार कर दिया और घर, परिवार, रिश्ते-नातों के विविध रंगों एवं सौंदर्यवाली दुनिया ले आई। यहां अपने समय के साथ-साथ वैसे लोग भी हैं जिनका संबंध कवि के बचपन से रहा है। और वह याद करता है कि जो बच्चे थे अब लड़के हो गये गए होंगे। बावजूद जो उनमें भी एक दूसरे से मिलने-जुलने की इच्छाएं बची होंगी। 'मरी नहीं होंगी इच्छाएं' कविता में इस स्मृति की बानगी देखें-

लड़के हो गये होंगे

मेरी ही तरह अधबूढ़े

लेकिन मरी नहीं होंगी इच्छाएं।

कवि का यह साथीपन का अभाव उम्र के बढ़ने के साथ-साथ अधिक खल रहा है। उनकी यहीं संवेदनशीलता समाज एवं व्यक्ति के संबंधों को मजबूत करने में अहम भूमिका निभाती है। घोर भौतिकतावादी युग में भी किसी के उपकार को, उसके दिये प्यार को और सबसे बढ़कर उसकी निस्पृहता को कभी भूल नहीं पाता है। गुरबत के दिनों में काम आनेवाले लोग अपने अभिभावकों से कम नहीं होते हैं। उनके बढ़े हाथ माता-पिता के हाथ की तरह निःस्वार्थ लगते हैं। कवि ऐसे ही लोगों के जीवन एवं उनके त्याग और प्रेम से अपनी कविता को रचता है। यहां कवि की मार्मिक और इस टूटते, बिखरते एवं क्षीण होती मानवीय संवेदनाओं को ताजा करनेवाली कविता 'इन हाथों के बिना' में देखी जा सकती है-14

जिनकी निस्पृहता कई गुन

बड़ी दिखती है पिता से

पिता की तरह दिखते हैं इनके हाथ

मां की तरह दिखती हैं इनकी आंखें

इन आंखों और इन हाथों के बिना

अनाथ-सी लगती है यह दुनिया।

यही स्नेह, प्रेम और कृतज्ञता इंसान की जिंदगी को और अधिक मानवीय बनाते हैं। इसके अलावा 'बनारस', 'घर मर जाते हैं', 'वे नाखून थे' आदि कविताओं में जीवन का सहज बोध और जनसारधारण के प्रति उत्कट भाव एवं विचारों का उदात्त चित्रण है।

समकालीन कवियों में राकेश रेणु को भुलाया नहीं जा सकता। उन्होंने लिखा बहुत कम है लेकिन जब हम उनकी कविताओं से गुजरते हैं तो उसमें बदलते वैश्विक परिप्रेक्ष्य में भारतीय समाज में हो रहे मानवीय मूल्यों के क्षरण, स्त्री की अस्मिता, उसके भूमंडलीकरण में बहुराष्ट्रीय कंपनियों के उत्पाद की तरह ब्रांड बनना और राजनीति का ढोंग उजागर होते दिखाई देते हैं। इनकी कविताओं में राजनीतिक चेतना सत्ता के संचालकों के पाखंडी मुखौटों को नोंच डालती है। सबसे चिंतनीय बात है स्वतंत्रता की आड़ में स्त्री का बाजार में माल में बदल जाना। जबकि देश के अधिकांश हिस्से में स्त्री विभिन्न प्रकार के अभावों एवं परेशानियों में जी रही है। सरकार भी विकास योजनाओं को जमीन पर दिखाने के लिये इनका इस्तेमाल करती है। कवि विकास के ढिंढोरा पीटनेवाले नेताओं की कलई अपनी एक कविता 'अप्सरा' में इस प्रकार खोलता है-10

हमारी स्त्रियाँ भी बन सकती हैं विश्व-सुंदरियां जिनसे

और ऊपर उठाया जा सकता है इच्छाओं का स्तर

इनके जरिए

अंतराल में कुछ अन्य स्त्रियां दिखाई जाती हैं

माथे पर पानी से भरे मटके ढोती चापानल चलाती

हमें बताया जाता है पचास-साला उपलब्धियों के बारे में

कि पानी मिल जाता है गांवों में अब

कुछ स्त्रियां सयास हंसती हैं कैमरों के सामने

जिनसे खुशहाली का बोध कराया जाता है।

राकेश रेणु की कविताएं नये चिंतन एवं सोच की अभिव्यक्ति हैं। इसमें सामाजिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक बदलाव के तीखे स्वर हैं।

निष्कर्ष

इस पीढ़ी में और भी कवि के नामों का उल्लेख किया जा सकता है। जिन्होंने अपनी बेहतर कविताओं से समकालीन हिंदी कविता में अपनी धमाकेदार उपस्थिति दर्ज करायी थी। सभी कविताओं में एक दायित्व बोध है जो अपने समाज, देश एवं मनुष्य की बदहाली को दूर कर लोकतांत्रिक मूल्यों के आधार पर नये समाज की रचना के प्रति प्रतिबद्ध है। इन कवियों के पास किसी विचारधारा को लेकर आग्रह नहीं बल्कि जीवन को उसकी स्वाभाविक गति, विकास एवं परिवर्तन को समझने की वैज्ञानिक दृष्टि है। यही कारण है कि आज की कविताओं में अनंत संभावनाएं देखी जा रही। आज की कविता का परिवेश निरंतर विस्तृत होता आ रहा है। अनेक युवा कवि लिख रहे हैं। इनकी रचनाओं पर समय -समय पर विचार-विमर्श करने की आवश्यकता आ पड़ी है।14

संदर्भ

1)१. (सं) ऋषि कुमार चतुर्वेदी- हिन्दी कहानी, १९७७ ई, गं*थायन प्रकाशन, अलीगढ।
2)२. बली सिंह-दो पीढिया, वर्तमान साहित्य (अंक ७५), बाघम्बरी हाउसिंग स्कीम, इलाहाबाद, पृष्ठ-५०
3)३. विनोद दास-पोस्टर, पहल पत्रिका, अंक ३७, जबलपुर, पृष्ठ-२५९
4)४. धूमिल-गृह युद्ध, सुदामा पांडे का प्रजातंत्र, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, १९८४ ई. पृष्ठ-३८
5)५. लीलाधर जगूडी-प्रार्थना, घबराये हुए शब्द, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, १९८१ ई. पृष्ठ-५१
6)६. राजेश जोशी-असली किस्सा तबीयत हिरन हो जाने का, इसलिए भोपाल, पृष्ठ-२०
7)७. विनोद दास-वजीफा, खिलाफ हवा से गुजरते हुए, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, १९८६ ई., पृष्ठ-३८
8)८. धूमिल-मकान, संसद से सडक तक, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, १९७२ ई. पृष्ठ ५५-५६
9)९. लीलाधर जगूडी-बलदेव खटिक, बची हुई पृथ्वी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, १९८१ ई. पृष्ठ-१०३
10)१०. उपरिवत, पृष्ठ-१०८-१०९
11)११. धूमिल-सुदामा पांडे का प्रजातंत्र, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, १९८४ ई. पृष्ठ-१८
12)१२. धूमिल- किस्सा जनतंत्र, कल सुनना मुझे, युगबोध प्रकाशन, वाराणसी, पृष्ठ-१८
13)१३. केदारनाथ सिंह-जमीन पक रही है, प्रकाशन संस्थान, दिल्ली, १९८० ई. पृष्ठ-४६
14)१४. रमेशचन्द्र साह- स्थित प्रज्ञ, हरिश्चन्द्र आओ, प्रकाशन संस्थान, दिल्ली, १९८० ई. पृष्ठ-१७

International Journal of Advanced Research in Arts, Science, Engineering & Management (IJARASEM)

| Mobile No: +91-9940572462 | Whatsapp: +91-9940572462 | ijarasem@gmail.com |

www.ijarasem.com